

समाजहितैषी
भगवती प्रसाद लडिया

समाजहितैषी भगवती प्रसाद लडिया

प्रो. भूपेन्द्र रायचौधरी

साहित्यवाचस्पति, कृतकार्य अध्यापक
गौहाटी विश्वविद्यालय



श्री मारवाड़ी हिंदी पुस्तकालय

फैंसी बाजार, गुवाहाटी-781001

SAMĀJHITAISHI BHAGAWATI PRASĀD LADIĀ: A short biography of Freedom Fighter, Propounder of Hindi, Social Worker and Founder of Nabin Pustak Bhandar, Golaghat Late Bhagawati Prasad Ladia by Dr. Bhupendra Roychoudhury, M.Sc., M.A. (Gold Medalist), Ph.D., Sahitya Vasaspati in Hindi and Published by Shree Marawari Hindi Pustkalaya, Fancy Bazar, Guwahati-781001.

First Edition : 5th December, 2021 Price : Rs. 100.00

प्रकाशक : श्री नारायण खाकोलिया (संयोजक)
श्री मारवाड़ी हिंदी पुस्तकालय
हेम बरुवा रोड, फैंसी बाजार,
गुवाहाटी-781001
दूरभाष : 94353-41471

ग्रंथ स्वत्त्व : लेखक

प्रथम संस्करण : 101तम जन्म पूर्तिवर्ष, मार्गशीर्ष शुक्ल द्वितीया, संवत् 2078
रविवार 5 दिसम्बर, 2021

वितरक : भगवती प्रकाशन
गरिमा मिलेनियम, गोपीनाथ बरदलै रोड
पानबाजार, गुवाहाटी-781001 (असम)
दूरभाष : 94011-70225

अलंकरण : दिव्य प्रकाश लडिया

मूल्य : 100.00 रुपए

मुद्रक : कृत्तिका मुद्रण
पानबाजार, गुवाहाटी-781001

आमुख

श्री मारवाड़ी हिंदी पुस्तकालय अपने स्थापना काल से ही पत्र-पत्रिकाओं, पुस्तक और अपने मुखपत्र का प्रकाशन हमेशा से करता आया है। हिंदी और असमिया भाषा में कोई भी सामग्री प्रकाशित करना श्री मारवाड़ी हिंदी पुस्तकालय के लिए एक गौरव की बात रही है। स्वतंत्रता सेनानी, राष्ट्रभाषा हिंदी प्रेमी और पुस्तकालय आंदोलन के पुरोधा रहे, गोलाघाट निवासी, स्वर्गीय **भगवती प्रसाद लडिया** के ऊपर एक पुस्तक प्रकाशित करने का निर्णय हमने हमारी कार्यकारिणी सभा में इसलिए लिया था, क्योंकि एक तो उनका जन्मशताब्दी वर्ष चल रहा है, दूसरा, गोलाघाट अंचल के अलावा असम तथा देश के दूसरे भाग के लोग भी उनको करीब से जाने, इस उद्देश्य से इस पुस्तक के प्रकाशन जरूरी हो गया था। उनके पुत्र श्री घनश्याम लडिया ने जब हमें यह बात बताई कि असमिया एवं हिंदी के वरिष्ठ लेखक **प्रो. भूपेन्द्र रायचौधरी**, स्वर्गीय भगवती प्रसादजी की जीवनी पर एक पुस्तक लिख रहे हैं, तब हमने इस अवसर को हाथ से जाने नहीं दिया और तुरंत इस पुस्तक के प्रकाशक बनने का निर्णय ले लिया। स्वर्गीय लडियाजी पर पूर्वोत्तर के एक वरिष्ठ लेखक द्वारा पुस्तक लिखना, और वह भी बिखरी हुई सामग्रियों को जुटा कर एकरूप में ले कर आना जैसा दुरूह कार्य, जिसे श्री भूपेन्द्र रायचौधरी ने लडियाजी के पुत्र घनश्याम के साथ मिल कर पूरा किया है।

श्री मारवाड़ी हिंदी पुस्तकालय के साथ स्वर्गीय लडियाजी का एक विशेष प्रेम रहा है। सन 1980 में जब वे श्री मारवाड़ी हिंदी पुस्तकालय में पधारे थे, तब उन्होंने पुस्तकालय की व्यवस्था को न सिर्फ सराहा, बल्कि प्रेरणा के कुछ शब्द 'आगांतुक टिपणी पुस्तिका' में पुस्तकालय के लिए मंगल-कामना भी लिखी थी। उस दिन के बाद से वे जब भी गुवाहाटी आते थे, उनकी हर शाम यहीं श्री मारवाड़ी हिंदी पुस्तकालय में बीतती थी। असम के साथ पूर्वोत्तर में राष्ट्रभाषा के प्रचार-प्रसार और हिंदी पुस्तकालय आंदोलन के जनक रहे स्वर्गीय लडियाजी अपने उच्च विचारों के साथ हमेशा से ही हिंदी और असमिया भाषा और संवाद के पक्षधर रहे थे।

किसी भी समाज के पास धरोहर के रूप में अगर कोई पुस्तकालय है, तो उस समाज के पास वह सम्पत्ति है, जिसको पाने के लिए लोग तरसते हैं। आम तौर

पर व्यापारिक समाज के रूप में जानने वाले मारवाड़ी समाज के पास धरोहर के रूप में विद्यमान है, गुवाहाटी स्थित श्री मारवाड़ी हिंदी पुस्तकालय, जिसकी स्थापना सन 1925 में स्वर्गीय **केदारमल ब्राह्मण**, **स्व. धनीराम खाकोलिया**, **स्व. देवीदत्त सांगनेरिया**, **स्व. रामप्रसाद जालान** और **स्व. बालुराम शर्मा** की अगुवाई में फैंसी बाजार के गोविंददेवजी की ठाकुरबाड़ी में की गई थी। कोई कल्पना कर सकता है कि सन 1925 में किस तरह का राजनैतिक परिदृश्य असम में विराज कर रहा था। न जाने कितने परिवर्तन के दौर से असम गुजर रहा था। ब्रिटिश शासन की ज्यादातियां अपने उफान पर थी और शिक्षा व्यवस्था में आमूल परिवर्तन किए जा रहे थे। ऐसी परिस्थितियों में भी गुवाहाटी के कुछ उत्साही लोगों ने हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए श्री मारवाड़ी हिंदी पुस्तकालय की स्थापना एक मंदिर में की, जहाँ भगवान की रोजाना पूजा होती थी, उसी मंदिर में ज्ञान रूपी एक और मंदिर की स्थापना की गई। तब से श्री मारवाड़ी हिंदी पुस्तकालय गुवाहाटी के फैंसी बाजार में श्री मारवाड़ी दातव्य औषधालय की डिस्पेंसरी के दूसरे तल्ले पर कार्यरत है। एक अहिन्दी प्रदेश में हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए श्री मारवाड़ी हिंदी पुस्तकालय की अपनी एक छोटी-सी भूमिका है।

हमें आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है कि यह पुस्तक सभी को स्वर्गीय **भगवती प्रसाद लडिया** के जीवन एवं उनके कृतित्व से परिचित करवाएगी। उनके आदर्श और हिंदी के प्रति प्रेम और स्वतंत्रता आंदोलन में उनकी भूमिका से सभी को रू-ब-रू करवाएगी। यह पुस्तक युवाओं के लिए भी प्रेरणा का कार्य करेगी, ऐसी हमें आशा है।

रवि अजितसरिया

अध्यक्ष

अशोक कुमार सिवोटिया

मंत्री

श्री मारवाड़ी हिंदी पुस्तकालय

दूरभाष : 94350-19883

97060-09253

गुवाहाटी- 781001

दिनांक: 12 नवंबर, 2021

मधुर गुंजन

असम के गोलाघाट नगर में स्थित नवीन पुस्तक भंडार के प्रतिष्ठापक आदरणीय भगवती प्रसाद लडियाजी (1920-2006 ई.) एक स्वतंत्रता सेनानी के रूप में सामाजिक जीवन में कदम रखे और स्वातंत्र्योत्तर काल में पुस्तक-व्यवसाय के साथ समाज-सेवा एवं हिंदी के प्रचार-प्रसार में कार्यरत थे। उन्हें 'गोलाघाट का विश्वकोष' माना जाता था, क्योंकि गोलाघाट की सारी जानकारियां उनके पास थीं, चाहे वे अतीत से संबंधित हो या वर्तमान से। गोलाघाट के और गोलाघाट आने वाले वैसे कोई विरले सज्जन ही होंगे, जिन्होंने नवीन पुस्तक भंडार में न आए हों। भगवतीजी के सौम्य व्यवहार से आगंतुक इतने प्रभावित होते थे कि कभी भूलते नहीं थे। उनमें से एक मैं भी था।

मैं जब बरपेटा सरकारी उच्चतर माध्यमिक विद्यालय में पढ़ रहा था, तब 1968 ई. के 26-28 मई को मुझे पिताजी डॉ. हीरेंद्र नाथ रायचौधरी के साथ जोरहाट जाने का एक सुनहरा अवसर मिला था। पिताजी तब पशु चिकित्सा विभाग में रिनडरपेंडेंट अफसर थे और पूरे असम के पशु चिकित्सालयों में जाकर निरीक्षण करते थे। जोरहाट में अपना काम पूरा कर पिताजी जब एक दिन शाम को गोलाघाट जा रहे थे, तब मैं भी उनके साथ था। गोलाघाट पहुंचकर वे पशु चिकित्सालय के काम में जुट गए और मैं अकेला टहलते हुए मुख्य पथ तक आया और अचानक मेरी दृष्टि नवीन पुस्तक भण्डार पर टिक गई। मैं भीतर जाकर देखा तो एक वरिष्ठ व्यक्ति गद्दी पर बैठे हुए थे और पास में उनका बेटा खड़ा था। शाम के समय दुकान पर कोई ग्राहक न होने के कारण दोनों ने मुझसे परिचय पूछा। मैं विद्यार्थी होने के बावजूद ऐसे मिले मानो मैं कोई बहुत परिचित व्यक्ति हूं और लंबे अंतराल के बाद मिला हूं। गद्दी पर बैठने वाले व्यक्ति ही आदरणीय भगवती प्रसाद लडियाजी थे और खड़ा रहने वाला उनका पुत्र श्री ज्योति प्रसाद लडिया। ज्योतिदा ने मेरे साथ बड़े उत्साह से बात की थी। काफी देर बात कर गीताप्रेस से प्रकाशित 'कर्मयोग' नामक एक ग्रंथ खरीदकर मैं लौट आया, पर मेरे मन में इन दोनों का प्रभाव छाया रहा। इस मुलाकात के दस वर्षों के बाद ज्योतिदा ने जब गुवाहाटी के लखटकिया में 'सखा' नामक पुस्तक प्रतिष्ठान खोलकर व्यवसाय प्रारंभ किया तब उनसे मेरी काफी नजदीकी बढ़ी। अस्वस्थ होने पर वे 1980 ई. में पुनः गोलाघाट लौट गए।

सन् 1998 ई. में अस्वस्थ होने के कारण भगवतीजी उनके छोटे बेटे श्री घनश्याम लडिया के पास गुवाहाटी के आमबाड़ी में कंठीराम बरदलै के किराए के घर में करीब दस महीने रहे। तब उनसे कभी-कभी मिलने का अवसर मिला था। गुवाहाटी में किसी कार्यक्रम में वे आते तब भी उनसे मिलने का अवसर मिलता था। इसी बीच श्री घनश्याम लडिया से मेरी काफी नजदीकी बढ़ गई थी। आदरणीय भगवती प्रसाद लडियाजी कई वर्षों तक अस्वस्थ रहे। उनसे मिलने के लिए मैं एक बार गोलाघाट गया था और अपना अंतिम प्रणाम उन्हें किया था।

आगामी 20 नवंबर, 2020, (मार्गशीर्ष शुक्ल द्वितीया, संवत् 2077) को आदरणीय भगवती प्रसाद लडियाजी का शतवर्ष पूर्ण हो रहा है। 2006 ई. के 23 अगस्त की पुण्यतिथि से भी चौदह वर्ष श्रीराम के वनवास की तरह बीत गए। उनके जीवनकाल में और न मृत्योपरांत उनके व्यक्तित्व पर कोई पुस्तक का प्रकाशन नहीं हो पाया। मृत्यु के तीन सप्ताह बाद 'आरावली से धनश्री तक एक सुदीर्घ परिक्रमा' शीर्षक से सौ पृष्ठों की एक स्मारिका पुस्तक 14 सितंबर, 2006 ई. को प्रकाशित हुई, जिसमें करीब तीस व्यक्तियों ने असमिया-हिंदी-अंग्रेजी में छोटे-छोटे लेखों द्वारा अपना श्रद्धा-सुमन अर्पित किया। श्री घनश्याम लडिया अपने पिता की स्मृतियों को सजीव बनाए रखने के लिए विभिन्न लेखकों से आलेख बगैरह लिखवाकर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित कराते रहे और स्वर्गीय लडियाजी के संपर्क में रहने वालों से उनके जीवन के बारे में पुस्तक लिखवाने का भी आग्रह करते रहे, पर पिछले चौदह वर्षों में सफल नहीं हो पाए। आदरणीय लडियाजी के समय में ही देरगांव कमल दुवरा कॉलेज के अध्यापक लक्ष्मीकांत महंत जी ने उनके जीवन से संबंधित कुछ तथ्यों का आकलन तो किया था पर उनके दिवंगत होने पर वह 80 पृष्ठ की पांडुलिपि में ही सिमट कर रह गई। सन् 2001 में द्वि-भाषिक असमिया और हिंदी 'साहित्य' नामक पत्रिका 'भगवती प्रसाद लडिया 81तम जन्मवार्षिकी संख्या' के रूप में घनश्याम लडिया व सुनीता लडिया ने प्रकाशित किया।

मैं अपने को अक्षम मानकर भी स्वर्गीय भगवती प्रसाद लडिया पर एक छोटी-सी जीवनी लिखने के लिए आगे बढ़ते हुए ठिठक गया। क्योंकि एक पुस्तक के लिए तथ्यों का अभाव है। स्व. लडियाजी ने विभिन्न विषयों पर विशेषतः आउनिआटी के सत्राधिकार पीतांबर देव गोस्वामी, राष्ट्रभाषा के प्रचारक कमल नारायण देव, बाबा राघवदास शर्मा, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, राम मनोहर लोहिया, राधाकृष्ण खेमका, पं. ध्यानदास शर्मा, असम में हिंदी का प्रचार-प्रसार आदि पर लगभग शताधिक आलेख लिख कर विभिन्न हिंदी-असमिया पत्र-पत्रिकाओं में छपवाया था। इनके आलेख संकलित न

**श्री मारवाड़ी हिंदी पुस्तकालय
की आगंतुक टिप्पणी पुस्तिका में भगवतीजी का मंतव्य**

होने पर उनकी साहित्यिक उपलब्धि पर कुछ भी बताना संभव नहीं होगा। वे प्रचार-विमुख होने के कारण न इन्हें संकलित करके छपवाया था न किसी को छापने के लिए दिया। अपने लेखों को छिपाकर रखा और वे काल-कवलित हो गए। अब कोई शोधार्थी मेहनत करके प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं में खोजें और वे संकलित-संपादित हों तब लडियाजी की रचना-प्रतिभा पर सही विचार किया जा सकता है।

लक्ष्मीकांत महंत द्वारा जुटाई गई कुछ सामग्री, विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित डॉ. गिरीश बरुवा, श्री क्षीरोद कुमार गोस्वामी, डॉ. अजित बरुवा, डॉ. हेम बरा, नागेंद्र शर्मा, केशव शइकिया आदि के कुछ लेखों के आधार पर; डॉ. हेम बरा द्वारा कृत 'गोलाघाट इति कथा' की पुस्तक; श्रीमान घनश्याम द्वारा प्रस्तुत पिताजी के संस्मरणों को आधार मानकर अपनी सीमाबद्धता के भीतर यह छोटी-सी जीवनी प्रकाशित होकर आपके हाथों में है। इसके निमित्त मैं उन सभी स्मृतिचरण के लेखकों, लडिया परिवार के सभी सदस्यों के प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ और घनश्याम लडिया के प्रति स्नेहाशील, क्योंकि उन्होंने ही अपने पिताजी के विषय में प्रकाशित निबंध एवं महत्वपूर्ण दस्तावेज संग्रह व सहेज कर रखे थे, जिसे मुझे देकर अनुगृहीत किया है।

इस पुस्तक के प्रकाशन हेतु श्री मारवाड़ी हिंदी पुस्तकालय, गुवाहाटी द्वारा सहयोग प्राप्त करने के कारण इस संस्था के अध्यक्ष श्री रवि अजितसरिया, मंत्री अशोक कुमार सिवोटिया, संयोजक श्री नारायण खाकोलिया एवं सदस्यगण के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ।

आदरणीय भगवती प्रसाद लडियाजी से संबंधित यह पहली पुस्तक है। मेरा विश्वास है मेरी सीमा को जानकर सहृदय पाठक जो स्वर्गीय लडियाजी के प्रति श्रद्धानत हैं, वे इसे सहर्ष स्वीकार करेंगे। आशा है कि कोई विद्वान उनके लेखों को संग्रहित कर एक संपूर्ण जीवनी भविष्य में प्रस्तुत करेंगे, तब तक मेरा यह प्रथम असफल प्रयास माना जाता रहेगा। इस पुस्तक के माध्यम से मैं आदरणीय भगवती प्रसाद लडियाजी के प्रति शतवर्ष के अवसर पर श्रद्धा-सुमन अर्पित करता हूँ।

-भूपेन्द्र रायचौधरी
दूरभाष : 98642-70122

16, सतीर्थ पथ, मथुरा नगर
गुवाहाटी-781006
3 जून, 2020 ई.

श्री

गोवाटी १३.८.२०

आज मैंने कश्मीर का मारवाड़ी बंधु को द्वारा संज्ञाहित
जानी। मारवाड़ी पुस्तकालय देखने का मौका मिला।
मैंने कश्मीर की पुस्तकालय हिंदी के अलावा देखे हुए मे
इस पुस्तकालय का महत्व कम नहीं है। भारत की प्रथम
नगरी प्रान्तीय राजधानी में ऐसा पुस्तकालय का होना
जो साधारण में शिक्षा के प्रचार के साथ साथ हिंदी
के प्रचार में इस हिंदी संस्था में बल प्राप्त होगा।
वर्तमान में इस पुस्तकालय की युवा कार्यकर्ताओं
के प्रयत्न से काम ही चलत गई है। पुस्तकालय में
पुस्तक का संग्रह सुंदर ढंग से किया गया है। इस
के साथ पाठकों के लिए दंडिक लगाने की आवश्यकता
के लिए वाचनालय (पाठशाला) की भी व्यवस्था हुई है।
वाचनालय में गिरीश प्रसाद पत्र पत्रिकाओं का संग्रह
अच्छा है। ये कार्यकर्ताओं ने संग्रह करना है कि
वे संस्था में शिक्षा प्रद, अच्छे विचारों वाली हर एक
विषय की पुस्तकों का संग्रह करें। इस के लिए पाठकों
में भी पुस्तकें भण्डारण करने लगने सम्मति ली जाए।
पुस्तकालय के आडरि उद्देश्यों के अलावा ही पुस्तकें
संस्था में रखने का प्रयत्न हो। पुस्तकें धार्मिक व
सामाजिक विवादों से बचे रखकर पुस्तकालय का
संचालन किया जाए। लगभग लगभग पर पुस्तकालय
द्वारा पुस्तकें मर्यादित व प्रतीक पाठकों को ही
अयोग्यता प्रदान की जाएगी। साथ ही आवश्यकता
पर प्रतिभाओं के आभार भी है। इस में
शांतिपूर्ण आगे बढ़ने का प्रयत्न करें। इसके लिए
पुरस्कार आदि दिए जायें। मैं इस पुस्तकालय
के कार्यकर्ता व धार्मिक पाठकों में इसकी
दिनांक १३.८.२०२०। पुस्तकालय
आभार प्राप्त में एक आडरि लिखा का रूप में
इसकी हर एक पुस्तक की संग्रह का प्रयत्न करता है।
अधिकांश पुस्तकें गोवाटी के साथ संग्रह
श्री मारवाड़ी पुस्तकालय
गोवाटी
१३-८-२०

विषय-क्रम

पृष्ठ

□ मधुर गुंजन

□ प्रथम अध्याय : जीवन -झांकी

13-23

सूचना- गोलाघाट की पृष्ठभूमि- मारवाड़ी का व्यवसाय : गोलाघाट नाम- डालुराम का वंश परिचय- भगवती प्रसाद का जन्म, बाल्यकाल एवं शिक्षा- विवाह- लडियाजी का परिवार- लडियाजी का सामाजिक जीवन- दो नारियों का प्रभाव- महीयसी चुन्नी देवी- पतिव्रता भगवती देवी- स्वास्थ्य हानि- सम्मान-सत्कार- लडियाजी का देहावसान- निष्कर्ष।

□ द्वितीय अध्याय : स्वतंत्रता सेनानी

24-50

सूचना- जोरहाट सावर्जनिक सभा : आसाम एसोसिएशन- असम प्रदेश कांग्रेस समिति एवं असहयोग आंदोलन- गांधीजी का जोरहाट में आगमन- पांडु कांग्रेस के लिए गोलाघाट का प्रतिनिधि मंडल- गोलाघाट में गांधीजी का आगमन- लडियाजी का कांग्रेस में योगदान- भारत-त्याग आंदोलन की पृष्ठभूमि- बयालीस में गोलाघाट की भूमिका- रेल गिरानेवाली घटना- बयालीसोत्तर आंदोलन में लडियाजी की भूमिका- द्विखंडित स्वतंत्रता- गोलाघाट में गांधीजी का चिताभस्म- निष्कर्ष।

□ तृतीय अध्याय : राष्ट्रभाषा प्रेमी

51-67

सूचना- असम में हिंदी की पृष्ठभूमि- जोरहाट में हिंदी की शिक्षा-बत्ती- भुवनचंद्र गगै के हिंदी-प्रशिक्षण का प्रयास- हिंदी-प्रचार में गांधीजी की भूमिका- असम में हिंदी प्रचार का शुभारंभ- असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति- गोलाघाट में हिंदी प्रचारक लडियाजी- गोलाघाट में हिंदी का त्रिवेणी-संगम- राष्ट्रभाषा समिति का विभाजन- तिनसुकिया में राष्ट्रभाषा का अधिवेशन- लडियाजी राष्ट्रभाषा के संचालक बने- शिवसागर जिला प्रचारक सम्मेलन- हिंदी विद्यार्थी के प्रेरणादाता- देवनागरी लिपि के हिमायती थे लडियाजी- निष्कर्ष।

□ चतुर्थ अध्याय : पुस्तक व्यवसाय

68-81

सूचना- भगवतीया की दुकान- आदर्श पुस्तक की दुकान- नवीन पुस्तक भंडार के प्रति विद्वतजनों की सम्मतियां- डॉ. नगेन सइकिया- चंद्रप्रसाद सइकिया- राम गोस्वामी- विश्वेश्वर हाजरिका- नीलमणि फुकन- जेहिरुल

हुसैन- लक्ष्मीकांत महंत- बिमल आगरवाला- बौद्धिक अड्डा : गद्दी प्रसंग- क्षीरोद कुमार गोस्वामी- डॉ. हेम बरा- नवीन पुस्तक भंडार का प्रकाशन- नवीन पुस्तक भंडार में देश-प्रेम की झांकी- निष्कर्ष।

□ पंचम अध्याय : समाज सेवा

82-101

सूचना- दुर्गतजनों की सहायता- गोलाघाट हिंदी पुस्तकालय में लडियाजी की भूमिका- कुछ सम्मतियां : आचार्य काका कालेलकर- अमृतलाल नानावटी- भंवरमल सींधी- कमलनारायण देव- हनुमान प्रसाद पोद्दार- कामाख्या प्रसाद त्रिपाठी- हरेश्वर गोस्वामी- विश्वनाथ प्रसाद गुप्ता- वैकुंठनाथ सिंह- संस्थाओं के प्रति लडियाजी का सहयोग (क) गौहाटी विश्वविद्यालय- (ख) गोलाघाट कॉलेज- (ग) प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन, नागपुर- (घ) गोलाघाट साहित्य सभा- हिंदी विद्यापीठ की स्थापना- छात्र सम्मेलन से लडियाजी का संबंध- मारवाड़ी युवा सम्मेलन में लडियाजी की भूमिका- विभिन्न सामाजिक कार्यों में लडियाजी- गोलाघाट में विभिन्न जयंतियों के आयोजक- (क) तुलसी जयंती- (ख) गीता जयंती- (ग) हनुमान जयंती- (घ) गांधी जयंती- शताब्दी समारोहों में अगुवा लडियाजी : पंडित हेमचंद्र गोस्वामी : हेमचंद्र बरुवा : पंडित ध्यानदास शर्मा : रामदास रविदास- पत्रकारिता एवं निबंधकार- निष्कर्ष।

□ षष्ठम अध्याय : मोहक व्यक्तित्व

102-110

सूचना- अध्ययनशीलता- ज्ञानानुरागी- हंसमुख- आतिथ्यसेवा- असम प्राण- परोपकार की नसीहत- समाजसेवा का पाठ-जेब ऑफिस- प्रचार विमुख- निस्पृह- गुप्तदान- जीवंत किम्बदंतीस्वरूप- राजनीतिक संन्यास- लडियाजी का जीवनदर्शन- निष्कर्ष।

□ चित्रावली :

111-120

प्रथम अध्याय

जीवन - झांकी



सूचना : असम के गोलाघाट के सामाजिक-जीवन और बौद्धिक संसार को सतत् प्रभावित करनेवाले व्यक्तित्व के अधिकारी भगवती प्रसाद लडियाजी 'नवीन पुस्तक भंडार' के लिए, समाज-सेवा हेतु, राष्ट्रभाषा के प्रचार करने के निमित्त प्रसिद्ध व लोकप्रिय होनेवाले व्यक्तित्व हैं। युवा-काल से ही स्वतंत्रता संग्राम में शामिल होना, गांधीवादी दर्शन से प्रभावित होकर खादी कपड़े पहनना, गांधीजी के आह्वान पर हिन्दी प्रचार में समूचे जीवन को खपाने वाले भगवती प्रसादजी कभी ख्याति के पीछे नहीं भागे और न किसी पुरस्कार एवं पेंशन के लिए मोहताज बने। गोस्वामी तुलसीदासजी के लोकमंगल के आदर्श को अपना कर अपने को चुपचाप समाज-जीवन में उत्सर्जित करके दूसरों के लिए प्रेरक बने। उन्होंने 'नवीन पुस्तक भंडार' को सारस्वत साधना का केंद्र बनाने में खून-पसीना बहाकर एक आदर्श कायम किया, जो भविष्य में इतिहास के पन्ने पर लिखा जाएगा। अतः इस प्रचार-विमुख व्यक्ति के व्यक्तित्व के कुछ बिंदु सामने आने पर हो सकता है नई पीढ़ी को प्रेरणा मिले, उन्हें जीवन-पथ पर अग्रसर होने के निमित्त कुछ दिशा-निर्देश मिले। अपने अटल विश्वास एवं दृढ़ निश्चय के साथ मौन साधना से आगे बढ़कर कैसे महान कार्य में भागीदार बना जा सकता है, तथा सामाजिक जीवन का अटूट अंग होना संभव हो सकता है- इसे भगवती प्रसाद लडियाजी की जीवन-कथा हमें हमेशा याद दिलाती रहेगी।

गोलाघाट की पृष्ठभूमि : धनश्री नदी के तटवर्ती गोलाघाट का प्राचीन नाम था 'टोपोलाघाट' या 'दैयांग शहर'। धनश्री नदी द्वारा विभाजित इस इलाके में डिमासा कछारी या बोड़ो जाति ने निवास किया था। दंतकथा है कि द्वितीय पांडव भीमसेन एवं हिडिम्बा के मिलन से उत्पन्न वंशधर ही डिमासा कछारी या हिडिम्बियाल कछारी है। संभवतः बराही राजा महामाणिक्य इसी के वंशधर थे, जिनके दरबार में नगांव के 'रामायण' के महाकवि माधव कंदलि थे। महापुरुष शंकरदेव ने कंदलि को 'अप्रमादी कवि' की गरिमा देकर उनके सप्तकांड रामायण का 'आदिकांड' श्रीश्री माधवदेव द्वारा और 'उत्तरकांड' अपने से

अनुवाद कर इसे संपूर्ण किया था। आहोमों के आगमन के पूर्व तक मध्य और ऊपरी असम का अधिकांश भाग डिमासा कछारी द्वारा शासित था। इसके बाद डिमासा कछारियों के साथ आहोमों का अनेक बार संघर्ष हुआ था, जिसका साक्षी है गोलाघाट इलाका, तत्कालीन दैयांग-मरडि इलाका और धनश्री घाटी का मैदानी भाग। गोलाघाट के उत्तर से महाबाहु ब्रह्मपुत्र प्रवाहमान है, इसके दक्षिण में नागाभूमि, पश्चिम में कार्बी आंग्लोंग और पूर्व में काकडोंगा नदी को सीमा कर जोरहाट और घाटी इलाका। आहोम स्वर्गदेव चुपात्फा या गदाधर सिंह ने (1681-1696 ई.) कामचोर वैष्णवों से एक सड़क का निर्माण करवाया, जो 'धोदर आलि' (आलसियों का रास्ता) के नाम से जाना जाता है। यह सड़क नुमलीगढ़ से गोलाघाट शहर के बीच से बछा-दैयांग के पास से आमगुड़ी-नामती होकर नामरूप-नाहरकटिया तक गई है। आहोम राजशासन के समय इस पथ का काफी महत्व था, वर्तमान भी यह असम-नागालैंड संयोजक पथ के रूप में जाना जाता है। गदाधर सिंह के समय दैयांग-मुख के फारकटिंग होकर कछारी हाट से नेघेरिटींग तक निर्मित एक अन्य पथ का नाम था- 'अकार आलि'। इतिहास के साक्ष्य से जाना जाता है कि कछारियों से हस्तगत करने पर धनश्री घाटी के नीचे 'मरंग' की स्थापना स्वर्गदेव प्रताप सिंह (1603-1641 ई.) के आदेश पर की गई थी, जिसमें नगांव के शलाल, बेबेजीया, अभयापुर, नामदां, दिहिंग आदि स्थानों के लोगों को बसाया गया था। इसी राजा के समय मोमाइ तामुली बरबरुवा ने दैयांग इलाके को- ऊपर दैयांग, नाम दैयांग और बछा दैयांग नामकरण कर वृत्ति के अनुसार लोगों को बसाया था। इतिहास के अनेक उतार-चढ़ाव और विशेषतः बर्मी आक्रमण से दैयांग इलाका काफी क्षतिग्रस्त हो गया। सन् 1816 में बर्मी आक्रमण होने पर यहां के लोग जान हथेली पर लेकर इधर-उधर भाग गए और जहां-तहां बस गए। इसके परिणाम स्वरूप यह इलाका विशेषतः धनश्री नदी के आसपास घने जंगल से घिर गया। उन्नीसवीं सदी के प्रारंभ यानी संभवतः 1835 ई. में **कस्तुरचंद्र जालान** नामक एक मारवाड़ी व्यवसायी व्यवसाय करने के उद्देश्य से इसी धनश्री घाटी के जंगल में आए हुए थे। उन्होंने ही इस जंगल की साफ-सफाई कराकर नए व्यवसाय केंद्र में रूपांतरित किया था। स्थान का नाम- 'टोपोला घाट' या 'दैयांग शहर' के नाम का भी परिवर्तन हुआ था।

मारवाड़ी का व्यवसाय : गोलाघाट नाम : 1835 ई. में सूरजमल जालान के दादा कस्तुरचंद्र जालान एवं गोलाब चंद्र जालान राजपूताना के रतनगढ़ नगर से ग्वालपाड़ा होकर नौका से धनश्री के तट पर आए थे। उन्होंने कलेक्टर से अनुमति लेकर जंगल को कटवाकर इलाके को साफ कराया। कुछ दिनों के बाद बांस-फूस की झोपड़ियों का निर्माण करके नौका द्वारा बाहर से पर्याप्त सामान लाकर जमा करने लगे। फलतः यहां

से डिमापुर, कोहिमा के रास्ते विविध खाद्य-सामग्री का मणिपुर तक परिवहन होने लगा। सामान्यतः मारवाड़ी की दुकानों को 'गोला' कहा जाता था और इन्हें 'केयां' कह कर पुकारा जाता था। धीरे-धीरे ओसवाल, पिंचा आदि मारवाड़ी व्यवसायी आने पर गोला की संख्या बढ़कर चौदह-पंद्रह हो गई, जिससे यह स्थान एक अच्छा व्यवसाय केंद्र बना। लोग दूर-दूर से सामान खरीदने आने लगे। वे लोग कहने लगे 'केयां गोलारपरा माल आनिबलै जाओं' यानी मारवाड़ी के गोले से माल लाने जाता हूँ। 'गोला' शब्द के प्रचलन से पूर्व का नाम 'टोपोला घाट' परिवर्तित होकर 'गोलाघाट' हो गया। इस क्रम में राजपुताना के व्यवसाई डालुराम महाराष्ट्र के खामगांव में कपास-व्यवसाय में नुकसान होने की वजह से उसे छोड़कर गोलाघाट पहुंचे। यह डालुराम ही भगवती प्रसाद लडिया के दादा थे।

डालुराम का वंश परिचय : शुरू में इस वंश के लोगों को 'बागला' कहा जाता था। इस वंश के लोग राजस्थान के बीकानेर राज्य के 'चुरू' शहर में रहते थे। लगभग तीन सौ वर्ष पूर्व इस वंश के नाथुराम नामक व्यक्ति चुरू त्यागकर मंडावा में आकर बस गए। इनकी कई पीढ़ियां मंडावा में ही रह गईं। नाथुराम की वंश परंपरा इस प्रकार है- नाथुराम-खीवाराम- देवीदत्त- कपूरचंद- गंगाराम- देवीराम और भानीराम (एक शाखा मध्यप्रदेश के रतलाम में बस गई); देवीराम का कोई पुत्र न था, भानीराम के दो पुत्र थे- आशाराम और तुगनराम। देवीराम महाराष्ट्र के खामगांव में कपास का व्यवसाय करते थे, उन्होंने आशाराम को दत्तक पुत्र के रूप में स्वीकार कर उसे अपने पास खामगांव में रखा। 1865 ई. से आशाराम खामगांव में रहकर व्यवसाय करने लगे। आशाराम की दो संतानों में पुत्र का नाम डालुराम और कन्या का नाम लक्ष्मी देवी था। रामगढ़ के नेवेटिया परिवार के जगन्नाथ नेवेटिया के साथ लक्ष्मी देवी का विवाह हुआ। व्यवसाय के कारण जगन्नाथ नेवेटिया लगभग 1880 ई. से असम के जोरहाट में थे। आशाराम की मृत्यु होने पर खामगांव के व्यवसाय में नुकसान होने लगा। इसलिए डालुराम खामगांव का व्यवसाय छोड़कर भाग्य आजमाने के लिए 1888 ई. में बहनोई के पास जोरहाट पहुंचे। कुछ दिन जोरहाट में बीताकर सन् 1890 ई. में गोलाघाट आकर डालुरामजी ने 'हाटखोला' मुहल्ले में व्यवसाय प्रारंभ किया।

डालुरामजी ने गोलाघाट आकर गुरुचरण बरबरा से थोड़ी-सी जमीन लीज पर लेकर अपना गोला प्रारंभ किया। इस गोले में राशन, कपड़े एवं नित्य व्यवहृत सामान रखे गए थे। दुकान का नाम पिता और अपने नाम को मिलाकर रखा- **आशाराम-डालुराम**। उस समय बाजार में अधिक दुकानें न थीं। केवल बुधवार और रविवार के

दो दिन ही हाट लगती थी। दो वर्षों तक व्यवसाय करके लाभ होने पर डालुरामजी अपने परिवार को मंडावा से गोलाघाट ले आए। यहाँ गोलाघाट में डालुरामजी एक पुत्र के पिता बने, पुत्र का नाम रखा गया लक्ष्मीचंद्र। डालुराम लडिया (अग्रवाल) की पूर्व उपाधि 'बागला' थी, परंतु परवर्ती समय में ये नाम के साथ 'लडिया', 'अग्रवाल' में से कोई भी उपाधि लिखते थे।

स्वाभाविक तौर पर पुत्र के जन्म से डालुरामजी काफी प्रसन्न हुए और दुकान का नाम परिवर्तित कर अपने और पुत्र के नाम से रखा- **डालुराम-लक्ष्मीचंद्र**। नाम परिवर्तन के साथ इसे नया रूप प्रदान किया गया और राशन की सामग्री हटाकर इसे पूर्णतः कपड़े की दुकान में परिवर्तित किया गया। दुर्भाग्यवश डालुराम की पत्नी रुक्मिणी देवी का सन 1915 ई. में निधन हो जाने के पश्चात उनका पुनः विवाह सन् 1917 ई. में तिनसुकिया के हुक्मीचंद चमड़िया और धापीदेवी चमड़िया की पुत्री चुन्नी देवी से हुआ। सन् 1915 ई. तक डालुरामजी लीज में लेने वाली लगभग एक बीघा जमीन पांच हजार रुपए में गुरुचरण बरबरा से खरीद लेते हैं। सन् 1915 ई. में डालुरामजी के पुत्र लक्ष्मीचंद्र का विवाह राजस्थान के लक्ष्मणगढ़ निवासी लालजी चूड़ीवाला (चौधरी) की कन्या कमला देवी से संपन्न हुआ। विवाह के बाद लक्ष्मीचंद्रजी पत्नी के साथ गोलाघाट में ही रहने लगे। सन् 1918 ई. में प्रथम विश्व युद्ध के समय डालुरामजी की मृत्यु हो गई। लक्ष्मीचंद्र अपनी विमाता चुन्नी देवी के साथ कारोबार संभालने लगे।

भगवती प्रसाद का जन्म, बाल्यकाल एवं शिक्षा : लक्ष्मीचंद्र और कमला देवी ने गोलाघाट में एक पुत्र को 20 नवंबर, 1920, (मार्गशीर्ष शुक्ल द्वितीया, संवत् 1977) को जन्म दिया। जन्म लेनेवाला पुत्र का नाम भगवती प्रसाद लडिया था। इसके उपरांत सन् 1923 ई. में लक्ष्मीचंद्र अन्य एक पुत्र युगलकिशोर के पिता बनते हैं। चूंकि चुन्नी देवी निःसंतान थी, इसलिए वे भगवती प्रसाद को दत्तक पुत्र के रूप में पालती हैं।

दीननाथ बेजबरुवाजी के पुत्र साहित्यरथी लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा के बड़े भाई गोविंदचंद्र बेजबरुवा द्वारा सन् 1886 ई. में गोलाघाट में स्थापित प्राथमिक विद्यालय में भगवती प्रसाद का छह वर्ष की आयु में दाखिला होता है। उस समय तक यह मीडिल स्कूल बन गया था। असमिया माध्यम के इस विद्यालय में भगवती प्रसाद के पाठारंभ के कुछ दिनों के बाद अस्वस्थ होने पर लक्ष्मीचंद्र पत्नी कमला देवी, कनिष्ठ पुत्र युगलकिशोर और बुआ लक्ष्मीदेवी के साथ अस्वस्थता के बावजूद राजस्थान के अपने पैत्रिक गांव मंडावा वापस लौट गए। वे सेठा के रामगढ़ आकर इलाज कराते हैं। तब गोलाघाट के व्यवसाय का दायित्व लक्ष्मीचंद्रजी की विमाता चुन्नी देवी संभालती हैं। वे

बड़ी बुद्धिमती और कार्यकुशल थीं। पोते के बारे में सोचकर उन्होंने कारोबार में किसी भी प्रकार की हानि होने से बचाया। साथ ही छह-सात वर्ष के भगवती प्रसाद का भी दत्तक पुत्र के रूप में सारा दायित्व संभालती रहीं।

दुर्भाग्यवश भगवती प्रसाद के तीसरी कक्षा के उत्तीर्ण होते समय सन् 1929 ई. में पिता लक्ष्मीचंद्रजी का निधन हुआ। पिता की मृत्यु होने पर भगवती मंडावा जाता है। उसके बाद मामा के घर लक्ष्मणगढ़ में साल भर मोडिया और महाजनी विद्या नाना श्रीलालजी चूड़ीवाला के घर में रहकर गुरुकुल में सीखता है। साथ ही अपने पैतृक गाँव मंडावा में साल भर रहकर भजुराम बंजरंगलाल गुरु पाठशाला में शिक्षा ग्रहण करते हैं।

उस समय सारे भारतवर्ष में स्वतंत्रता आंदोलन जोरों पर था। गांधीजी के नेतृत्व में जतीय कांग्रेस ने अहिंसक सत्याग्रह प्रारंभ किया था। सन् 1930 ई. के 12 मार्च को गांधीजी ने नमक कानून तोड़कर दांडी यात्रा की थी। इससे पूरे देश में हलचल मची थी और एक नई आशा की किरण दिखाई देने लगी थी। उस समय भगवती प्रसाद दस वर्ष का बालक था पर उसके मन पर भी इस आंदोलन का प्रभाव पड़ा था। सन् 1931 ई. के 26 मार्च को क्रांतिकारी वीर भगत सिंह को फांसी पर चढ़ाए जाने के कारण पूरे देश में विरोध प्रदर्शन हुआ, जुलूस निकाले गए। मंडावा में भगत सिंह की फांसी के प्रतिवाद में निकाले गए जुलूस में ग्यारह वर्ष के भगवती प्रसाद ने भी स्वतः भाग लिया था और उसके मन पर इसका प्रभाव पड़ा था।

भगवती प्रसाद की माता कमला देवी बड़ी सीधी और धर्मपरायणा थीं। वे अपने हाथों से सिलाई किए हुए कपड़े पहनती थीं और सामान्य रूप से दिन गुजारती थीं।

नानी के साथ भगवती प्रसाद गोविन्दजी के मंदिर में रामायण-गीता पाठ ध्यान से सुनता था। इस धार्मिक माहौल ने भगवती के मन पर अमिट प्रभाव छोड़ा था।

सन् 1932 ई. तक भगवती प्रसाद गोलाघाट लौट आया और स्कूल जाना छोड़कर दादी चुन्नी देवी को व्यवसाय में हाथ बंटाने लगा। औपचारिक शिक्षा बाधाग्रस्त होने पर भी भगवती के मन में अध्ययन की लालसा बनी रही। उस समय उन लोगों के किराए के घर में यदुमणि छापाखाना में काम करनेवाले कांग्रेसी महानंद बरा रहते थे। भगवती ने बरा के पास असमिया-अंग्रेजी का अध्ययन किया। परवर्ती समय में वे जहां संभव होता था वहां सीखने के लिए सदा तत्पर रहते थे, इसमें उम्र की कोई बाधा आड़े नहीं आती थी। इस संदर्भ में विष्णु चलिहा, कार्तिक चलिहा, खर्गेश्वर तामुली, श्रीरामचंद्र दास के नाम गिनाए जा सकते हैं। भगवती प्रसाद ने गोपालचंद्र दे से बांग्ला एवं पंडित ध्यानदास शर्मा से हिंदी सीखी थी। वस्तुतः वे औपचारिक शिक्षा के बजाए स्वाध्याय से

ज्ञान उपार्जन करते थे। उन्होंने बड़े ध्यान से अखबार पढ़कर भाषा-ज्ञान प्राप्त किया और साथ ही देश-विदेश की जानकारी भी।

बचपन में ही भगवती प्रसाद को पितृ-स्नेह से वंचित होना पड़ा, माता के राजस्थान में रहने के कारण मातृ-स्नेह से भी वंचित हुआ। उन्हें माता-पिता का सारा स्नेह दादी चुन्नी देवी से ही मिला था। कठिन वास्तविकता अनुभव से भी भगवती प्रसाद की कल्पना में कोई बाधा नहीं पहुंची। उन्हें हमेशा ऐसा लगता था कि समाज उन्हें इशारे से बुला रहा है। इससे उनके मन में परोपकार और सेवा की मनोभावना के बीज पड़े।

विवाह : सन् 1937 ई. में मात्र सत्रह वर्ष की आयु में भगवती प्रसाद का विवाह राजस्थान के नवलगढ़ निवासी जयदेव मुरारका और तीजी देवी की कन्या भगवती देवी के साथ संपन्न हुआ। विधाता का कैसा चमत्कार! पति-पत्नी दोनों के नामों में सादृश्य-भगवती प्रसाद और भगवती देवी। भगवती देवी बड़ी सीधी, पतिपरायण और परोपकारी स्वभाव की महिला थीं।

लडियाजी का परिवार : भगवती प्रसाद लडियाजी के भरपूर परिवार में छह लड़के एवं एक कन्या हैं। उनके पुत्रों के नाम हैं- मोहनलाल, सोहनलाल, ज्योतिप्रसाद, रमेश प्रसाद, कैलाश प्रसाद और घनश्याम; एक मात्र कन्या गायत्री देवी। यथा समय सभी का विवाह संपन्न होने पर लडियाजी को पोते-पोतियों, नाती-नातिनों का भी सुख मिला। यह एक बड़ा ही सुखी-सुसंस्कृत परिवार है; जहां भारतीय परंपरा की मर्यादा का पालन एक बड़ी उपलब्धि है। माता-पिता के प्रति आदर की भावना बनाए रखने में समर्थ सभी अपने-अपने कर्तव्यों का दायित्वपूर्ण तरीके से पालन करते आए हैं। कभी भी परिवार के किसी सदस्य से लडियाजी को दुःख नहीं पहुंचा।

लडियाजी का सामाजिक जीवन : भगवती प्रसाद युवावस्था में देश के स्वतंत्रता आंदोलन में काफी सक्रिय रहे। स्वतंत्रता के उपरांत वे अपने व्यवसाय के समानांतर राष्ट्रभाषा हिंदी का प्रचार, विभिन्न सामाजिक संगठनों से जुड़कर लोक कल्याण की भावना से प्रेरित रहे। इस दृष्टि से वे समाज के एक महत्वपूर्ण व्यक्ति बन गए थे। अपने सरल और प्रचार विमुख स्वभाव के कारण अनेक लोग उनसे मिलने आते थे और सामाजिक, बौद्धिक चिंतन-मनन के लिए कुछ समय व्यतीत करके आह्लादित होते थे।

दो नारियों का प्रभाव : भगवती प्रसाद लडिया के परिवार में दो नारियों की देन एवं उनके प्रभाव का विशेष महत्व रहा है। एक के अभाव में उनका जीवन मझधार में फंसे नौका की तरह और दूसरे के अभाव में चम्पूविहीन नौका की तरह था। इन दोनों

नारियों में प्रथम है महीयसी दादी चुन्नी देवी और द्वितीय है धर्मपत्नी भगवती देवी।

महीयसी चुन्नी देवी (1899-1966 ई.) : डालुरामजी की दूसरी पत्नी और भगवती प्रसाद लडिया की दादी तिनसुकिया की विख्यात व्यवसायिक संस्था 'हुक्मचंद हरदेवदास' के स्वत्वाधिकारी हुक्मचंद चमड़िया की बेटी थीं। हुक्मचंद चमड़िया और धापी देवी के दो पुत्र थे- हरदेवदास और मदनलाल; चार पुत्रियां थीं- मन्नी देवी, पार्वती देवी, सुखनी देवी और चुन्नी देवी। इन चार दादी-बहनों में चुन्नी देवी सुंदर, ऊंचे कद की और साहसी महिला थीं। सन् 1917 ई. में गोलाघाट के डालुरामजी से विवाह होने के सालभर बाद उन्हें पति वियोग सहना पड़ा, क्योंकि प्रथम विश्व युद्ध की शुरुआत में सन् 1918 ई. में उनका निधन होता है। इसलिए निःसंतान चुन्नी देवी ने सौत पुत्र लक्ष्मीचंद्र के प्रथम पुत्र भगवती प्रसाद को दत्तक लेकर लाड़-प्यार के बीच पाला-पोसा। दुर्भाग्य से सन् 1929 ई. में लक्ष्मीचंद्र का निधन राजस्थान में होने के कारण गोलाघाट के व्यवसाय का पूरा दायित्व उन्हें ही संभालना पड़ा; इस तरह मझधार में फंसी नौका को एक सहारा मिला।

चुन्नी देवीजी बुद्धिमती और साहसी महिला तो थीं, वे सोने का भी व्यवसाय करती थीं; साथ ही सामाजिक कार्यों में वे चंदा आदि देकर समाज-सेवा भी करती थीं, इसलिए परिचितजन उनसे सलाह-मशविरा करते। गोलाघाट कॉलेज स्थापित करने में भी उनका प्रशंसनीय योगदान था। वे धार्मिक प्रकृति की महिला थीं, पर्याप्त दान-दक्षिणा देतीं और विभिन्न तीर्थों का भ्रमण करके ज्ञान-धर्म भी प्राप्त करती थीं। भगवती प्रसाद जी के कनिष्ठ पुत्र श्री घनश्याम लडिया का संस्मरण इस प्रकार का है :

मेरे पिताजी की दादी चुन्नी देवी को मैंने देखा है। वे बड़ी साहसी महिला थीं। वे किसी की परवाह नहीं करती थीं। वे किसी के भी पास निःसंकोच जा सकती थीं, गोलाघाटवासी उन्हें 'दादी' कहकर पुकारते थे। हमारा घर 'दादी का गोला' नाम से प्रसिद्ध था। हमारे घर के पास के शिव मंदिर की उन्होंने ही प्रतिष्ठा की थी। इस मंदिर में आने वाले ब्राह्मण, गरीबजनों को वे दान देती थीं।

ये चुन्नी देवी भगवती प्रसादजी की केवल प्यारी दादी ही नहीं थीं, बल्कि वे संरक्षिका और व्यवसाय-पाठ सीखाने वाली आदि-गुरु थीं। कुछ बड़े होने पर भगवती प्रसाद को स्वयं कलकत्ते जाकर वहां से कपड़े लाना पड़ता था। चुन्नी देवी चाहती थीं कि पोता भगवती व्यवसाय में रमा रहे, पर पोते के सामाजिक कार्यों-विशेषतः स्वतंत्रता आंदोलन और राष्ट्रभाषा के काम में व्यस्त रहने पर वे खुश नहीं रहती थीं, इसलिए

परिचितजनों से शिकायत भी करती थीं। इस संदर्भ में पुस्तकालय सेवा के निदेशक राम गोस्वामी का एक संस्मरण इस प्रकार है :

भगवती प्रसाद लडिया सर्वप्रथम कपड़े का व्यवसाय करते थे, परंतु उनका मन सामाजिक कार्यों में रमता था। दुकान के प्रति समुचित ध्यान न देने के कारण उनकी दादी काफी अप्रसन्न रहती थीं। मेरे जाने पर वे मुझसे भगवती की अमनोयोगिता के बारे में शिकायत करतीं और व्यवसाय में होने वाले नुकसान का ब्यौरा देतीं। भगवती के मन के चिंतन को न समझकर दादी इस प्रकार कठोर बर्ताव करती थीं।
(साहित्य, 2001 ई. पृष्ठ 5)

यह महीयसी नारी ज्येष्ठ महीने की नवमी तिथि (संवत् 2023) अर्थात् सन् 1966 ई. की 14 मई को सिधार गईं।

पतिव्रता भगवती देवी (1922-1995 ई.) : राजस्थान के नवलगढ़ के जयदेव मुरारकाजी की कन्या भगवती देवी ने अल्पायु से ही वैवाहिक संसार का दायित्व संभाला था। एक-एक करके छह पुत्रों और एक बेटी की माता बनकर पूरी तरह सांसारिक दायित्व में उलझ गई थीं। उनके व्यक्तित्व के संबंध में दार्शनिक पंडित डॉ. गिरीश बरुवाजी का कथन इस प्रकार है :-

एक यायावरी पति को सभी प्रकार से सहायता कर और उन्हें देश के काम में लगने के लिए अवसर प्रदान कर उन्होंने एक कष्टकर जीवन व्यतीत किया था। पति और परिवार के प्रति उनका जो त्याग है, वह वर्तमान की हर महिला के लिए अनुकरण एवं आदर्श के विषय हो सकते हैं। एक संयुक्त परिवार में रहकर उन्होंने पति तथा परिवार के अन्य सदस्यों की सेवा की थी। अपनों की किसी विपत्ति पर सहायता करना उनका व्रत था। एक आदर्श बहू का दायित्व निभाने में उन्होंने कभी कोताही नहीं बरती। सास के रूप में भी छह बहुओं को समान रूप से पुत्रीवत् स्नेह देती थीं।

अपने पति भगवती प्रसाद की तरह भगवती देवी में भी समाज सेवा की भावना थी। उन्होंने सन् 1942 के 'देश-त्याग' आंदोलन के समय पति के गुप्त दस्तावेजों को छिपाने में, हिंदी प्रचार के संदर्भ में, विभिन्न सामाजिक कार्यों का दायित्व निभाने में सहायता की थी। कहना चाहिए सांसारिक दायित्वों के बीच में भी वे पति के साथ छाया की तरह लगी रहती थीं। अतिथियों को देव-सम ज्ञान करके आतिथ्य करती थीं; मधुर

वचन से कुशल-क्षेम पूछती थीं। उनमें दूसरों को सहाय करने की प्रवृत्ति थी, किसी के दुख-दर्द को सहन नहीं कर पातीं। गोलाघाट के परिचितजनों में किसी का चेचक होने पर उन्हें दिखाने के लिए आते थे। विशेषतः गर्भवती महिला के प्रति वे सहानुभूतिशील थीं। वैसी गर्भवती के बुखार होने पर वे दस जड़ी-बुटियों का 'काढ़ा' निःशुल्क पीने के लिए देती थीं। उसके संकट होने पर वे रात को भी दौड़ती हुई देखने को जातीं। भगवती प्रसादजी के घर को संस्कारी करने में, सभी संतानों को सु-संस्कार, सु-शिक्षा देने में उनकी अग्रणी भूमिका रही है। इसी तरह वे अपने पति को पारिवारिक मामलों से चिंतामुक्त रखती थीं।

पतिव्रता **भगवती देवी** के संबंध में उनके कनिष्ठ पुत्र **घनश्याम** का उद्गार इसी प्रकार का है :

मेरी मां पिताजी की परछाई की तरह थीं। पिताजी के हर काम पर वे सहयोग करती थीं। एक बार मां के सख्त बीमार होने पर उन्हें पिताजी राजस्थान ले जा रहे थे। मैं भी साथ में था। हम रेल से गए थे। हमारे जाने वाले डिब्बे पर कुछ इजराइली पर्यटक न्यू जलपाईगुड़ी से चढ़े थे। पिताजी द्वारा हमें उनके लिए स्थान छोड़ने के लिए कहने पर हमने स्थान छोड़ दिया था। मां ने भी छोड़ा था। मेरी मां के सोने से उठने पर एक महिला ने आपत्ति की। उस पर हस्तक्षेप करके पिताजी ने कहा था कि इजराइल से हमारे देश की नई संधि हुई है। इसीलिए इजराइल से आने वाले पर्यटकों को हमें सम्मान के साथ स्थान देना चाहिए, नहीं तो हमारे देश का सम्मान नहीं बचेगा। यही थी पिताजी की महानुभवता।

मां राजस्थान जाने पर अनेक मंदिरों में जातीं, वहां वे दुखी-दरिद्रों को दान करती थीं। मां वहां हमारे कुलदेवी शाकंभरी मंदिर, बाबा सालासर (हनुमान) मंदिर, बाबा खाटुश्यामजी मंदिर, दादी रानी सती मंदिर आदि जाने पर मुझे साथ लेकर जातीं। मां बड़ी दानी थीं। किसी लड़की का विवाह होने पर वे रकम देकर आर्थिक सहायता करती थीं। विशेषतः ब्राह्मण और गरीब परिवारों की वे सहायता करती थीं। इनमें पिताजी से उन्हें कोई बाधा नहीं पहुंचती थी। मेरी मां गोलाघाट में सबकी चहेती थीं। वे हमारे पूरे परिवार को एक डोर से बांध कर रखी थीं।

ऐसी स्नेहशील पत्नी का वियोग भगवती प्रसाद जी को दस-ग्यारह वर्षों तक सहना पड़ा था, क्योंकि वे सन् 1995 ई. के माघ बिहू के 'उरुका' (संक्रांति) के दिन

यानी 13 जनवरी को सिधार गईं। डॉ. गिरीश बरुवा ने इस पर खेद व्यक्त करते हुए कहा है- 'हमारे जाने पर भगवती देवी हमारा और हमारे परिवार का कुशल-क्षेम पूछती थीं। भगवती देवी के रहने पर हमें यह स्मरण नहीं होता कि बिना चाय-जलपान के हमें आने की इजाजत मिलती थी। थोड़े समय के लिए जाने पर भी हमें जबर्दस्ती चाय पिलाती थीं। अतिथि की सेवा में ही मानो उन्हें स्वर्ग-सुख मिलता। अब उस घर में जाने का मन नहीं करता। कहीं मानो कुछ खो गया है। लगता है मानो अभी भगवती देवीजी निकल आकर हमसे बातें करेंगी।'

स्वास्थ्य हानि : सन् 1989 ई. में भगवती प्रसादजी यक्ष्मा रोग से पीड़ित हुए थे। उन्हें इलाज के लिए गोलाघाट से डिब्रूगढ़ ले जाना पड़ा था। साथ में जोरहाट निवासी उनके बड़े पुत्र मोहन प्रसाद और छोटे बेटे घनश्याम थे। वे लोग डिब्रूगढ़ मारवाड़ी आरोग्य भवन में जाकर ठहरे। उनका इलाज डिब्रूगढ़ मेडिकल महाविद्यालय के चिकित्सकों के द्वारा कराया गया था। उस बीमार हालत में भी वे साथ में दो कार्टून पुस्तकें लेकर गए थे। उन्होंने उन पुस्तकों को आरोग्य भवन के अधिकारियों को सौंप कर एक पुस्तकालय खोलने के लिए कहा था और वादा किया था कि भविष्य में और कुछ पुस्तकें देंगे। लगभग सप्ताहभर डिब्रूगढ़ में रहकर इलाज करवाया था।

पत्नी- निधन के तीन वर्षों के बाद सन् 1998 ई. में लडियाजी पुनः अस्वस्थ होने लगे। इस बार हृदय एवं मधुमेह रोग से वे पीड़ित थे। उस समय उनके छोटे बेटे घनश्याम गुवाहाटी के आमबाड़ी इलाके में कंठीराम बरदलै के एक किराए के घर में परिवार सहित निवास करते थे। पास ही नाट्यकार-पूर्व मंत्री लक्ष्मधर चौधुरी का घर था। वे प्रायः लडियाजी को देखने और संग देने आते थे। गुवाहाटी के विभिन्न डॉक्टरों से उनका इलाज करवाया गया था, विशेषतः डॉ. दीपति शर्मा भगवती प्रसादजी का देखभाल करती थीं। इन सभी डॉक्टरों को लडियाजी ने अपने मधुर व्यवहार से अपना बना लिया था। उस दौरान स्वास्थ्य-लाभ के निमित्त गुवाहाटी में उन्हें करीब दस महीने तक रहना पड़ा था। यह लेखक भी बीच-बीच में उनसे मिलता था।

सम्मान-सत्कार : यद्यपि लडियाजी सम्मान-सत्कार से दूर रहते थे, फिर भी समय-समय पर वे सम्मानित होते रहते थे। उनमें से सन् 1979 ई. में उन्हें गोलाघाट के केंद्रीय बिहू सम्मेलन में सम्मानित किया गया था। सन् 1985 ई. में गोलाघाट कवि-चक्र से विशेष रूप से सत्कार प्राप्त किया था। असम में हिंदी के प्रचार-प्रसार में विशेष भूमिका पालन करने के निमित्त अखिल भारतीय राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के सन् 1987 ई. के अधिवेशन में वे सम्बद्धित हुए थे। सन् 1995 ई. में गोलाघाट में आयोजित

पुस्तक-मेला में सम्मानित होने के उपरांत सन् 1998 ई. में गुवाहाटी में आयोजित उत्तर-पूर्व ग्रंथ मेला में अखिल असम पुस्तक प्रकाशन एवं विक्रेता संस्था ने उन्हें सम्बद्धित किया था। इसी तरह सन् 1998 ई. में देरगांव मारवाड़ी युवा मंच, 2004 ई. में स्वतंत्रता संग्रामी रामदास रविदास की जन्मशती के अवसर पर गोलाघाट उद्यापन समिति ने लडियाजी का सम्मान-सत्कार किया था तथा 2001 ई. में होजाई मारवाड़ी सम्मेलन ने भी सम्मानित किया था।

लडियाजी का देहावसान : प्रायः सन् 2003-04 ई. से भगवती प्रसाद लडियाजी बहुत कमजोर हो गए थे और सो-बैठकर ही दिन गुजारते थे। अपने मिलने वालों से दो-चार बातें करते। अधिकतर समय अपने में ही मगन रहते थे; हो सकता है उस समय अतीत का हिसाब-किताब करते हों, समाज के लिए क्या करना छूट गया उसका ध्यान करते। देहावसान के वर्ष भर पहले यह लेखक जब उनसे मिलने गोलाघाट गया था, तब हमने देखा कि वे एक बिस्तर पर कोने में बैठे हुए थे, बीच-बीच में कफ निकालकर जमीन पर रखे बर्तन में फेंक रहे थे। वे काफी कमजोर हो चुके थे।

सन् 2006 ई. में 23 अगस्त, बुधवार को दोपहर के 1.05 मिनट पर भगवती प्रसाद लडिया महाप्रस्थान के यात्री बन गए। दूसरे दिन 24 अगस्त को शोकाकुल माहौल में मारवाड़ी श्मशान में विपुल जनसमावेश के बीच उनका अंतिम संस्कार कर दिया गया।

गोलाघाट शहर के पुराने एक जेल पथ का नामकरण भगवती प्रसाद लडिया के नाम कर गोलाघाटवासियों ने उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की थी।

निष्कर्ष : इस प्रकार देखा जाता है कि असम के शिखर पुरुष भगवती प्रसाद लडिया की देन, उनके संस्कार एवं आदर्श आज भी महत्वपूर्ण हैं। उनका नारा था- 'अंग्रेजी में विद्वान बनो, अंग्रेज मत बनो'। अंग्रेजी में निमंत्रण-पत्र मिलने पर किसी भी कार्यक्रम में नहीं जाते थे, परंतु भारतीय भाषा में आने पर वे जाते थे।

भगवती प्रसाद लडियाजी समाज के ऊंचे कद के व्यक्ति या नेता या आत्मप्रचार मुखी इंसान नहीं थे। वे सहज-सरल जीवन व्यतीत करने वाले, सामाजिक कल्याण हेतु आत्मोसर्ग करने वाले, मानवीय सद्गुणों को प्रोत्साहित करने वाले व्यक्ति थे, जिन्होंने सरल जीवन की परिपाटी और उच्च विचाराधारा के आदर्श को अपनाया था। ईमानदारी, न्यायशीलता, परोपकारिता एवं सारस्वत साधना के आधार पर जीवन को आगे बढ़ाने वाले व्यक्ति थे। इसीलिए उनके जीवन के संस्कार का प्रभाव उनके संतानों पर भी पड़ा है और वे भी समाज में उच्च सम्मान के साथ सभी के स्नेह एवं आदर के पात्र बनने में समर्थ हुए हैं। □□□



द्वितीय अध्याय

स्वतंत्रता सेनानी

सूचना : भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का प्रत्यक्ष प्रभाव भगवती प्रसाद लडिया पर पड़ा था। बचपन में ही पितृविहीन होने पर कुछ दिनों तक पैतृक गाँव मंडावा एवं ननिहाल (राजस्थान का लक्ष्मणगढ़) में रहते समय उन्होंने वहां देश का राजनीतिक वातावरण देखा था। उन्हीं दिनों गांधीजी की दांडी-यात्रा ने भारतीय राजनीति में एक हलचल उत्पन्न की थी और भारतवासियों को स्वतंत्रता की किरण दिखने लगी थी। भगवती प्रसाद ने अनजाने में ही सन् 1931 ई. के 26 मार्च में क्रांतिकारी भगत सिंह को फांसी पर चढ़ाने के विरोध में निकाले गए जुलूस में भाग लिया था। उस समय भगवती प्रसाद की आयु मात्र ग्यारह वर्ष थी, इस घटना ने उनके किशोर मन पर प्रभाव विस्तार किया। इसके तीन वर्षों के बाद गोलाघाट में गांधीजी का दर्शन करने के समय वे मात्र चौदह वर्ष के थे। गांधीजी के भाषण को उन्होंने आग्रहपूर्वक सुना था और उनके रचनात्मक कार्यक्रमों का अनुपालन जीवनभर किया था। महात्मा गांधीजी का यह दर्शन भगवती प्रसाद के लिए पारसमणि का स्पर्श था, जिसका प्रभाव उन पर रहा।

जोरहाट सार्वजनिक सभा : आसाम एसोसिएशन : ब्रिटिश शासन के समय सर्वप्रथम जोरहाट ने असम में राजनैतिक सचेतनता का पथ प्रदर्शन किया था। इसका श्रेय कलकत्ते के प्रेसिडेंसी कॉलेज में अध्ययन करनेवाले चाय उद्योगपति जगन्नाथ बरुवाजी बी.ए. को मिलता है। उन्होंने महाराष्ट्र के रानाडे की सार्वजनिक सभा के आदर्श पर सन् 1894 ई. में जोरहाट सार्वजनिक सभा की प्रतिष्ठा की थी। असम की राजनीति में यह मील का पत्थर था। संस्था के संपादक (मंत्री) जगन्नाथ बरुवा खुद बने थे। इस संस्था का कार्यालय यद्यपि जोरहाट में था, फिर भी सामूहिक रूप में असम का कल्याण ही इसका उद्देश्य था। इसलिए असम के सभी वर्गों के लोग इसके सदस्य बने थे। उनके सहयोगी आधुनिक गुवाहाटी के निर्माता स्वदेश हितैषी माणिकचन्द्र बरुवा थे। जोरहाट के जगन्नाथ बरुवा और गुवाहाटी के माणिकचन्द्र बरुवा राजनैतिक

सचेतन व्यक्ति थे और इसीलिए दोनों सरकार के साथ अनबन में न जाकर आवेदन-निवेदन के माध्यम से असम की समस्याओं को प्रस्तुत करते थे, यथा सन् 1900 ई. के 13 मार्च को जगन्नाथ बरुवा ने गुवाहाटी में अनुष्ठित वाइसराय लॉर्ड कार्जन की सभा में वंचित होने वाले असम के समग्र कल्याण हेतु निवेदन किया था।

परवर्ती समय में सन् 1903 ई. को गुवाहाटी में स्थापित 'आसाम एसोसिएशन' में जोरहाट सार्वजनिक सभा का विलय हो गया। इसके मंत्री बने माणिकचन्द्र बरुवा और सहकारी-मंत्री जगन्नाथ बरुवा बी.ए.; अध्यक्ष गौरीपुर के जमींदार राजा प्रभात चन्द्र बरुवा थे। आसाम एसोसिएशन का प्रथम अधिवेशन सन् 1905 ई. के 22-24 अप्रैल को डिब्रूगढ़ में सम्पन्न हुआ। इसकी शाखाएं ग्वालपाड़ा, बरपेटा, गुवाहाटी, नगांव, तेजपुर, गोलाघाट और डिब्रूगढ़ में खोली गईं। अतः देखा जाता है कि विगत शताब्दी के प्रथम दशक में ही गोलाघाट के कुछ राजनैतिक सचेतन व्यक्ति आसाम एसोसिएशन की सदस्यता लेकर इसके अधिवेशन में भाग लेते हैं। सन् 1921 ई. के 17-18 अप्रैल को जोरहाट में छबिलाल उपाध्याय की अध्यक्षता में आसाम एसोसिएशन का एक विशेष अधिवेशन होता है, जिसमें एसोसिएशन को कांग्रेस में विलय करने के लिए चद्रनाथ शर्मा जैसे नेताओं ने प्रस्ताव रखा था। तदुपरांत इसके अधिकांश सदस्य कांग्रेस की सदस्यता लेते हैं। आसाम एसोसिएशन का विलय होकर असम प्रदेश कांग्रेस का नया संगठन बना।

असम प्रदेश कांग्रेस समिति एवं असहयोग आंदोलन : सन् 1885 ई. के 28 दिसंबर तारीख को बम्बई में एलेन अक्टोवियन ह्यूम नामक एक अंग्रेज द्वारा कांग्रेस का प्रारंभ किया गया। 1807 शॉक के 13 पौष (दिसंबर, 1885) सोमवार को मेधावी व्यक्तित्व के उमेशचन्द्र बनर्जी की अध्यक्षता में बम्बई में जातीय कांग्रेस का प्रथम अधिवेशन सम्पन्न हुआ। प्रारंभ में कांग्रेस ने सरकार से संघर्ष में न जाकर इसके प्रस्तावों को सरकार के सामने रखा था।

सन् 1919 ई. के 12 अप्रैल तारीख को अमृतसर के जालियांबाग हत्याकांड से कांग्रेसियों में विद्रोह की भावना पनपती है। अंग्रेज सरकार के पाशविक अत्याचार के प्रतिवाद स्वरूप कविगुरु रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने 'नाइटहुड' की उपाधि को त्यागा था। दक्षिण अफ्रीका से गांधीजी का भारत में प्रत्यावर्तन और कांग्रेस में योगदान इसके दिक्-परिवर्तन के सूचक बने। सन् 1920 ई. में पंजाब केसरी लाला लाजपत राय की अध्यक्षता में कलकत्ता में कांग्रेस का एक विशेष अधिवेशन सम्पन्न हुआ। इसी सभा में गांधीजी ने पहली बार स्वराज की मांग

पर असहयोग आंदोलन का प्रस्ताव पेश किया था, परंतु बंग नेता बिपिन पाल दास, देशबंधु चित्तरंजन दास आदि के साथ-साथ असम को एक स्वतंत्र राज्य की मर्यादा प्रदान न करने के कारण कर्मवीर नवीनचन्द्र बरदलै ने भी इसका विरोध किया था। इस विशेष अधिवेशन के तीन महीनों के बाद सन् 1920 ई. के 25-26 दिसंबर में नागपुर में विजय राघवाचारिया की अध्यक्षता में अनुष्ठित कांग्रेस के 35वें अधिवेशन में गांधीजी के अहिंसक असहयोग का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ और नवीन चन्द्र बरदलै के सहयोग से संविधान संशोधन करके असम को स्वतंत्र राज्य की मर्यादा प्रदान की गई। इसके परिणाम स्वरूप असम में प्रादेशिक कांग्रेस स्थापित करने का मार्ग खुल गया। स्वतंत्रता आंदोलन को गति प्रदान करने के उद्देश्य से असम के नेतागणों ने सन् 1921 के 5 जून को असम प्रदेश कांग्रेस कमेटी की स्थापना की। जालियांबाग हत्याकांड के विरोध में इ ए सी पद को त्यागने वाले कुलधर चलिहा को अध्यक्ष और नवीनचन्द्र बरदलै को महामंत्री बनाकर कमेटी इस प्रकार बनाई गई-

अध्यक्ष	: कुलधर चलिहा
उपाध्यक्ष	: बद्दीनारायण अगरवाला
महामंत्री	: नवीनचन्द्र बरदलै
सह-मंत्री	: कालीप्रसाद बरुवा महिबुद्दीन अहमद
कोषाध्यक्ष	: योगेन्द्रनाथ बरुवा
हिसाब निरीक्षक	: दुर्गानाथ बरुवा

कुलधर चलिहा के उप-सहकारी आयुक्त नियुक्त होने पर नवीनचन्द्र बरदलै के आग्रह पर तरुणराम फुकन अध्यक्ष बनने के लिए राजी हुए थे। अध्यक्ष तरुणराम फुकन और महामंत्री नवीनचन्द्र बरदलै के कार्यकुशल संचालन से असम के हर जिले में कांग्रेस कार्यालय स्थापित किए गए।

असम का केंद्रीय कार्यालय नवीनचन्द्र बरदलै के उजान बाजार स्थित घर 'शांति-भवन' में स्थापित हुआ। नवीनचन्द्र बरदलै के 'शांति-भवन' में कांग्रेस कार्यालय स्थापित होने पर यहां कांग्रेसियों का आना-जाना शुरू हो गया। महात्मा गांधी सन् 1921 ई. के 18 अगस्त को गुवाहाटी आगमन के दूसरे दिन यानी 19 अगस्त मंगलवार को शाम के लगभग चार बजे सहयोगियों के साथ बरदलै के 'शांति-भवन' आए।

नवगठित असम प्रदेश कांग्रेस समिति ने सन् 1921 ई. के जुलाई महीने में गुवाहाटी में इसका प्रथम अधिवेशन सम्पन्न किया। इसमें आगामी 28 जुलाई तारीख को प्रस्तावित अखिल भारत कांग्रेस कमेटी के अधिवेशन के लिए असम के तरुणराम फुकन, नवीनचन्द्र बरदलै, चन्द्रनाथ शर्मा, कुलधर चलिहा एवं पंडित कनकचन्द्र शर्मा को प्रतिनिधि के रूप में भेजने का निर्णय लिया गया। अन्य एक प्रस्ताव में महात्मा गांधी को असम बुलाना तय हुआ। ध्यातव्य है कि भारतीय जातीय कांग्रेस के नागपुर अधिवेशन में असम की ब्रह्मपुत्र घाटी को बंगीय प्रादेशिक कमेटी से अलग किया गया था। अतः गुवाहाटी में आयोजित कांग्रेस के प्रथम अधिवेशन में यह आशा की गई थी कि गांधीजी के आगमन से असम में असहयोग आंदोलन को अधिक बढ़ावा मिलेगा और सत्याग्रही भी उत्साहित होंगे।

गांधीजी का जोरहाट में आगमन : असम प्रदेश कांग्रेस के आह्वान पर सन् 1921 ई. के 18 अगस्त सोमवार को गांधीजी अपने सहयोगियों के साथ असम के गुवाहाटी आए। महात्माजी के साथ आने वाले महानुभवगण थे- यमुनालाल गांधी, प्रभुदास गांधी, मौलाना मोहम्मद अली, बेगम मोहम्मद अली, उनके सचिव के रूप में अलीगढ़ के अब्दुल हयात, मौलाना आजाद दोभाली, यमुनालाल बजाज और महात्माजी के सचिव के रूप में मराठा युवक हीरो।

गांधीजी गुवाहाटी के भरलुमुख स्थित तरुणराम फुकन के घर में अतिथि रहे। पहुंचने के दिन शाम को तरुणराम फुकन की विदेशी पोशाक से विदेशी वस्त्रों की होली जलाई। बैल गाड़ी से एक गाड़ी कपड़े जलाए गए। नवीनचन्द्र बरदलै के घर से भी इतने ही कपड़े पहुंचे। रात नौ बजे तक यह विदेशी वस्त्र दहन कार्यक्रम चला था।

गांधीजी सहयोगियों के साथ गुवाहाटी से तेजपुर पहुंचे, वहां से नगांव होकर 1921 ई. के 24 अगस्त को जोरहाट पहुंचे। सुबह आठ-नौ बजे तक वे जब जोरहाट पहुंचे तो पिछली रात की वर्षा से जगह-जगह पानी भर गया था। फिर भी वहां गांधीजी ने तीन सभाओं को सम्बोधित किया।

गांधीजी को जोरहाट में सेवा करने वालों में थे गोलाघाट के शंकरचन्द्र बरुवा (1895-1966 ई.)। उस समय गोलाघाट का भगवती प्रसाद लडिया करीब नौ महीने का बच्चा था।

गांधीजी के इस साहचर्य और उनके भाषण के कारण शंकर चन्द्र बरुवा के जीवन में काफी परिवर्तन आया। उन्होंने नौकरी छोड़ दी। सन् 1923 ई. में

बरुवाजी ने गोलाघाट आकर बरकाठनी में एक आश्रम की स्थापना की। साथ ही कांग्रेस संगठन में सक्रिय होकर इसे महत्वपूर्ण दर्जा दिलाया। सन् 1924 ई. में बरुवाजी ने गोलाघाट कांग्रेस के मंत्री का दायित्व स्वीकार किया।

पांडु कांग्रेस के लिए गोलाघाट का प्रतिनिधि मंडल : सन् 1925 ई. में सरोजिनी नायडु की अध्यक्षता में कानपुर में आयोजित कांग्रेस के 40वें अधिवेशन में असम प्रदेश कांग्रेस के मंत्री रोहिणीकांत हातीबरुवा तथा अखिल भारत बयन परिषद के असम शाखा के मंत्री कृष्णनाथ शर्मा ने कांग्रेस का अगला अधिवेशन गुवाहाटी के लिए आमंत्रित किया, जिसे स्वीकार कर लिया गया। इसी क्रम में सन् 1926 ई. के 26-28 दिसंबर को गुवाहाटी में कांग्रेस के 41वां अधिवेशन आयोजित करना तय हुआ। गुवाहाटी के पांडु में अनुष्ठितव्य जातीय कांग्रेस के 41वां अधिवेशन के स्वागताध्यक्ष तरुणराम फुकन और स्वागत मंत्री नवीनचन्द्र बरदलै बने। अनेक कठिनाइयों के बीच अधिवेशन की तैयारी चली, पर दुर्भाग्यवश 23 दिसंबर, 1926 ई. मंगलवार को हरिद्वार के गुरुकुल-कांगड़ी विश्वविद्यालय के स्वामी श्रद्धानन्दजी सरस्वती को दिल्ली में एक मुसलमान आततायी द्वारा गोली मारकर हत्या करने पर बाहर से आने वाले प्रतिनिधियों की संख्या कम रही।

मद्रास के श्रीनिवास आयंगर की अध्यक्षता में पांडु कांग्रेस का अधिवेशन सम्पन्न हुआ जिसमें कांग्रेसियों के साथ स्वराजिस्ट भी आए थे। इस अधिवेशन में उपस्थित रहने वाले प्रमुख नेतागणों में थे महात्मा गांधी, मोतीलाल नेहरू, सरदार वल्लभभाई पटेल, डॉ. राजेंद्र प्रसाद, पंडित मदन मोहन मालवीय, मुहम्मद अली, सौकत अली, सरोजिनी नायडु, एस. सत्यमूर्ति, टी. प्रकाशन, शंभूमूर्ति, रंगास्वामी आयंगर, अब्दुल कलाम आजाद, जे. यतीन्द्र सेनगुप्त, बी.एन. सासमल आदि। लंदन से पेथिक लॉरेंस और उनकी पत्नी पर्यवेक्षक के रूप में आए थे।

असम के सभी स्थानों से कांग्रेस प्रतिनिधि पहुंचे थे। गोलाघाट से शंकर चन्द्र बरुवा के नेतृत्व में सरुपथार के कुशल कोंवर, घिलाधारी मौजा के माहि-मेलीया गांव के भद्र फुकन, भोला बरुवा आदि के साथ किशोर प्रतिनिधि के रूप में ढलर सत्र के पन्द्रह वर्षीय पूर्णचन्द्र गोस्वामी भी पहुंचे थे। पांडु कांग्रेस के इस अधिवेशन के समय भगवती प्रसाद लडिया छह वर्ष का बालक था, प्राथमिक विद्यालय में दाखिला लेने वाला विद्यार्थी।

गोलाघाट में गांधीजी का आगमन : भारत सरकार सन् 1933 ई. के 1 अगस्त को अहमदाबाद के साबरमती आश्रम से कस्तूरबा गांधी, महादेव देसाई,

राजागोपालाचार्य समेत 32 सदस्यों के साथ गांधीजी को पुनः बंदी बनाती है, परंतु कारागार में स्वास्थ्य बिगड़ने पर गांधीजी को मुक्त कर दिया गया। कारागार से रिहा होकर महात्मा गांधीजी ने रचनात्मक कार्यक्रमों के अंतर्गत हरिजनों के लिए कोष इकट्ठा करने तथा उन्हें सामाजिक मर्यादा दिलाने के उद्देश्य से सन् 1933 ई. के 13 सितंबर से 1934 ई. के 3 अगस्त तक सत्याग्रह से दूर रहने की घोषणा की। हरिजन के कार्य के लिए गांधीजी ने समग्र भारत का भ्रमण किया और सन् 1934 ई. के 10 अप्रैल से 20 अप्रैल तक असम दौरे के दस दिनों का कार्यक्रम रखा।

हरिजन कल्याण के लिए कोष संग्रह की योजना लेकर असम भ्रमण करते समय गांधीजी ने गोलोकगंज, रूपसी, धुबड़ी, गौरीपुर, सापतग्राम, सरभोग, बरपेटा, रंगिया, टंग्ला, तेजपुर, गुवाहाटी, नगांव, गोलाघाट, जोरहाट, डिब्रूगढ़ भ्रमण किया था।

सन् 1934 ई. के 15 अप्रैल को बैसाख बिहू की सुबह ही नगांव, चापरमुख होकर गांधीजी सहयोगियों के साथ गोलाघाट पहुंचे। गांधीजी के गोलाघाट आगमन का वर्णन इस प्रकार है :

गोलाघाट में श्री महेन्द्रनाथ बरुवा के घर में गांधीजी के रुकने की व्यवस्था की गई थी। दोपहर तक बरुवाजी का बगीचा आस-पास के गांवों से आने वाले लोगों से भर गया। श्री शंकर चन्द्र बरुवा ने वहां सूत काटने की प्रदर्शनी लगाई थी। महात्मा ने भी उस सूत्र-यज्ञ में भाग लिया। यहां भी महात्मा ने कहा, 'आप लोग जानते हैं हमने खादी का काम क्यों हाथ में लिया है। हमारा उद्देश्य है गांवों को पुनः संजीवित करना। आज अनेक लोग राजनीतिक कारण से खादी व्यवहार करने लगे हैं। उन्हें ऐसा लगता है कि और कुछ करना नहीं है। खादी प्रयोग करने के कारण उन्हें ऐसा प्रतीत होता है कि गांवों में अन्य संपदाओं के प्रति ध्यान देने की आवश्यकता नहीं है। आज गांवों से ग्रामीण उद्योग विलुप्त होते जा रहे हैं और इसके फलस्वरूप गांव के कृषक केवल कच्चे माल के उत्पादक बन कर रह गए हैं। यहीं से गांवों का शोषण प्रारंभ होता है।'

इसके बाद गांधीजी ने कुछ चाय-बागानों के श्रमिकों, नागा, मिकिर आदि अनुसूचित जनजाति के लोगों से वार्तालाप किया। तदुपरांत गोलाघाट खेल मैदान में आयोजित सार्वजनिक सभा में

उनका अभिनंदन कर एक हजार रुपए का थैला प्रदान किया गया।

(असमत महात्मा, असम प्रकाशन परिषद, पृ. 117)

सन् 1934 ई. के 21 अप्रैल तारीख को प्रकाशित 'सादिनीया असमिया' में गांधीजी के गोलाघाट कार्यक्रम का विवरण इस प्रकार प्रकाशित हुआ :

अप्रैल के 15 तारीख (1934 ई.) रविवार के सुबह 10 बजे गांधीजी गोलाघाट में थे। उनके गोलाघाट आने पर गोलाघाट म्यूनिसिपलिटी, लोकेल बोर्ड, गोलाघाट कैवर्ट सम्मेलन, गोलाघाट महिला समिति और अनुसूचित संप्रदाय- इन सभी संस्थाओं ने अभिनंदन पत्र प्रदान किया। इसके बाद उन्होंने आबर, नागा, मिकिर, चाय बगीचे के मजदूरों के नेताओं से वार्तालाप किया। हरिजन सेवक संघ का काम कैसे किया जा सकता है, उसके संबंध में कार्यकर्ताओं की एक सभा में महात्माजी ने अपना वक्तव्य दिया। सूत काटने वाली एक प्रदर्शनी लगाई गई थी, वहां विभिन्न गांवों से करीब दो सौ महिलाएं पहुंची थीं।

शाम को तीन बजे से आयोजित एक वृहत् सार्वजनिक सभा में आम जनता की ओर से 800 रुपए, महिला समिति की तरफ से 140 रुपए और गोलाघाट हितसाधिनी सभा से 500 रुपए की थैलियां महात्माजी को भेंट की गईं। इसके बाद एक गाड़ी से वे जोरहाट के लिए प्रस्थान कर गए।

ध्यातव्य है कि रायबहादुर घनश्याम बरुवा के पुत्र महेन्द्रनाथ बरुवा के घर में गांधीजी को सेवा करने का अवसर भद्र फुकन, कुशल कोंवर, तिलक बरा समेत कई युवकों को मिला था। उस दिन गांधीजी का कार्यक्रम सुबह 7 बजे से शाम 7 बजे तक निर्दिष्ट होने के बावजूद वे सुबह 10 बजे पहुंचे थे। महात्माजी के दर्शन के निमित्त हजारों की संख्या में दर्शनार्थी आने पर गोलाघाट जनाकीर्ण हो गया था। इन लोगों में मिरि, मिकिर, नागा आदि जनजातियों के लोग भी थे। हरिजनों के बीच प्रसाद वितरण किया गया था। करीब 300 महिलाओं द्वारा सूत काटने का दृश्य देखकर गांधीजी मुग्ध होकर इसके आयोजक शंकरचंद्र बरुवा की प्रशंसा में पंचमुख हुए। शाम को तीन बजे से आयोजित सभा में करीब तीस हजार दर्शक उपस्थित थे। गांधीजी के दर्शन के लिए आने वालों में गोलाघाट के मारवाड़ी संप्रदाय का एक चौदह वर्षीय किशोर भगवती प्रसाद लडिया भी था, जिसके हृदय में गांधीजी

के रचनात्मक सुझावों, जैसे-खादी का प्रयोग, राष्ट्रभाषा हिंदी को अपनाना, स्वावलंबी होना, मादक द्रव्यों से दूर रहना आदि घर कर गए थे। स्मर्तव्य है कि उस दिन गांधीजी ने अफीम के नशे में धुत कुछ नशेड़ियों को देखकर खेद व्यक्त किया था।

गांधीजी ने सार्वजनिक सभा में कहा था- 'मुझे सम्बद्धित करने के लिए अनेक रूप खर्च किए गए हैं। यह सर्वथा अवांछनीय है। हरिजन की सेवा ईश्वर-सेवा से भिन्न कुछ नहीं है। हरिजन सेवक के स्वागत में अर्थ व्यय करना अनुचित है। मुझे चाहिए आपके हृदय का अभिनंदन। हरिजन सेवा-कार्य में मेरे साथ आप लोगों की सहायता का वादा चाहिए। मेरे स्वागत में पैसा खर्च करना उचित नहीं है। प्रभु की कृपा से मेरे अनेक मित्र हैं, जो मेरे लिए अन्न-वस्त्र की आपूर्ति करने के लिए तैयार हैं। हरिजन सेवा मेरा धर्म है। यह व्यक्ति के हृदय का धर्म है, लोगों को दिखाने वाली चीज यह नहीं है, हरिजन सेवा आत्मत्याग का ही व्रत है।'

गांधीजी के आग्रह पर कांग्रेस कार्यकर्ताओं एवं स्वयंसेवकों ने अपनी-अपनी टोपी खोलकर जनता से कोष संग्रह किया था, जो सात सौ सतासी रूपए पंद्रह आने नौ पाई की कुल राशि संग्रह हुई थी।

गोलाघाट में पौरसभा, लोकल बोर्ड, कैवर्त समाज, महिला समाज आदि विभिन्न संस्थाओं ने मानपत्र प्रदान कर गांधीजी को अभिनंदित किया था।

लडियाजी का कांग्रेस में योगदान : गांधीजी के दर्शन करने पर भगवती प्रसाद लडिया का मन कांग्रेस के प्रति झुकने लगा था। इसके पीछे दो कारक तत्व दिखाई पड़ते हैं- प्रथम, गांधीजी के व्यक्तित्व का प्रभाव और द्वितीय, उन लोगों के किराए के घर में रहने वाले महानंद बरा का सान्निध्य।

महानंद बराजी उत्तर लखीमपुर के बिहपुरिया के थे। वे बीस वर्ष की आयु में जीविका की तलाश में गोलाघाट आए और 'यदुमणि छापाखाना' (प्रेस) में नियुक्त हुए। वे कांग्रेसी थे और कांग्रेस की क्रांतिकारी विचारधारा से प्रभावित थे। इसीलिए क्रांतिकारी विचारधारा से संबंधित तत्कालीन प्रकाशित साहित्य को संग्रह करके नियमित रूप से पढ़ते थे। भगवती प्रसाद ने उनसे असमिया-अंग्रेजी का पाठ ग्रहण किया था। लगातार बराजी से मिलते रहने के कारण और साथ ही गांधीजी के दर्शन के अनुघटक के फलस्वरूप भगवती प्रसाद के मन में कांग्रेस घर कर गया।

धलर सत्र के पूर्णचंद्र गोस्वामीजी (1911-1993) के यदुमणि छापाखाना में महानंद बरा काम करने के लिए गोलाघाट आए थे। इस छापाखाने के मालिक चुंगी के धलर सत्र के थे। सन् 1926 ई. में किशोर स्वयंसेवक प्रतिनिधि के रूप

में पांडु कांग्रेस अधिवेशन में भाग लेने वाले गोस्वामीजी पूर्णतः कांग्रेसी हो गए थे और सन् 1928 ई. में पढ़ाई छोड़कर स्वतंत्रता आंदोलन में कूद पड़े थे। सन् 1929 ई. में मैट्रिक पास करके पंडित मदन मोहन मालवीय के काशी हिंदू विश्वविद्यालय में पढ़ने गए थे। नगांव के कलंग तट के कवि देवकांत बरुवाजी कमरा-साथी थे। परंतु गांधीजी के 1930 ई. के 'कानून भंग आंदोलन' के आह्वान पर पढ़ाई छोड़कर आंदोलन में कूद पड़े। फलतः सन् 1932 ई. में आई एस सी परीक्षा में उत्तीर्ण होने के बाद कुछ दिनों तक आगे अध्ययन जारी रखा, पर अंततः इसे अधूरा छोड़कर गोलाघाट लौट आए। स्वतंत्र रूप में व्यवसाय करने की दृष्टि से 'यदुमणि छापाखाना' सन् 1933 ई. के अंतिम दिनों में गोलाघाट के सदानंद दुवरा के किराए घर में स्थापित कर वे गोलाघाट के ही होकर रह गए। कांग्रेसी होने के कारण गोस्वामी जी से महानंद बराजी का आदर्शगत साम्य था। गोलाघाट के कांग्रेस आंदोलन में यदुमणि छापाखाना की भी एक महत्वपूर्ण भूमिका रही है। परवर्ती समय में भगवती प्रसाद का भी गोस्वामीजी से अंतरंग संबंध होता है। यदुमणि छापाखाना के स्वत्वाधिकार श्री क्षीरोद कुमार गोस्वामी का उद्गार इस प्रकार है :

यदुमणि छापाखाना में रहने वाले दो छापा यंत्रों से इतिहास का साक्ष्य मिलता है। पहला है, पिताजी का प्रिय टूडिल मशीन- जहां ब्रिटिश सरकार विरोधी कागज-पत्र, संग्रामी सूचना, पोस्टर आदि, प्रथम असमिया प्रगतिवादी काव्य-संकलन (सरकार के शोषण के खिलाफ) 'अभिमान' आदि छपते थे। पिताजी ने रात को ही मशीन स्वयं चलाकर संग्रामी सूचना समय पर वितरित करने में सहायता की थी। दूसरा है, सन् 1922 ई. में हमारे दादाजी स्व. तीर्थनाथ गोस्वामीजी द्वारा खरीदा गया हैंड प्रेस, जो आज भी कार्यक्षम है। इस मशीन पर छापे हुए असमिया वैष्णव साहित्य एकशरण नामधर्म के प्रचार में विशेष महत्वपूर्ण रहा है।

(पूर्णचंद्र गोस्वामी स्मृति ग्रंथ, पृ. 79-80)

सन् 1934 ई. में गोलाघाट में महात्मा गांधीजी के दर्शन के उपरांत सन् 1942 ई. तक भगवती प्रसाद लडियाजी स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय नेता थे। उन्होंने चुपचाप देश-मातृ की सेवा की थी, उनके कुछ उल्लेख इस प्रकार किए जा सकते हैं :

□ सन् 1934 में कांग्रेस दल में योगदान। उस समय उनकी आयु चौदह वर्ष की थी- यौवन के दहलीज पर पैर रखने वाले उत्साही किशोर।

□ गांधीजी के रचनात्मक कार्यक्रमों के प्रति आकर्षित होकर उनके क्रियान्वयन में आग्रही होना। इसके अंतर्गत खादी वस्त्र एवं राष्ट्रभाषा हिंदी का प्रयोग और प्रचार-प्रसार मुख्य हैं।

□ गोलाघाट में उस समय कांग्रेस के मुख्य कार्यकर्ता शंकर चंद्र बरुवा जी थे। उनके समकक्ष और एक कांग्रेस कार्यकर्ता थे भोला बरुवा।

उस समय शंकर चंद्र बरुवा का घर ही कांग्रेस का कार्यालय था। उस कार्यालय पर जाने से भगवतीजी की खर्गेश्वर तामुली, रत्नेश्वर तामुली, चिदानंद सड़किया, सदानंद चलिहा, चक्रेश्वर सड़किया से भेंट होती थी और उनसे आंदोलन की गतिविधियों की जानकारी मिलती थी।

□ शंकर चंद्र बरुवाजी से पहली बार भगवती प्रसाद ने चरखा और तकली से सूत काटने का प्रशिक्षण पाया था। उस समय विभिन्न प्रतिवाद आदि करने के लिए वालंटियर दल का गठन किया गया था। भगवती प्रसाद ने भी वालंटियर दल में नाम लिखवाया था।

□ देश के समाचारों से अवगत होने के लिए भगवती प्रसाद ने 'सादिनीया असमिया' अखबार नियमित रूप से पढ़ना प्रारंभ किया। इससे उन्हें असमिया भाषा की जानकारी मिली। उस समय वे जीउराम हाजरिका और खर्गेश्वर तामुली की पुस्तक-दुकान पर जाते थे।

□ रामदास रविदास (हरिजन) गोलाघाट कांग्रेस आंदोलन के एक सक्रिय व्यक्ति थे। उनकी दुकान पर विभिन्न पत्र-पत्रिकाएं रखी जाती थीं, जो वे स्वयं पढ़ते थे और दूसरों को भी पढ़ने के लिए देते थे। उनकी दुकान कांग्रेसियों की मुख्य अड्डा थी। भगवती प्रसाद भी वहां जाते थे, पत्र-पत्रिकाएं पढ़ते थे और अड्डों का आनंद उठाते थे।

□ गोलाघाट एमेसर थिएटर हॉल के साथ ही 'यूनियन हॉल एंड लाइब्रेरी' नामक पुस्तकालय था। वरिष्ठ नागरिक थिएटर के लंबे-चौड़े स्थान पर बैठकर ताश खेलते थे और कुछ शिक्षानुरागी युवक पुस्तकालय में बैठते थे। इनमें उल्लेखनीय हैं- चिदानंद सड़किया, राम गोस्वामी, प्रफुल्ल चलिहा, गिरीन पटंगिया, विनोद गगै, खर्गेश्वर तामुली, यदुनाथ सड़किया, दधि महंत, धीरेन दत्त इत्यादि। इस पुस्तकालय में भगवती प्रसाद भी जाते थे और समझदार श्रोता होकर विभिन्न चर्चा सुनते थे। इस संदर्भ में पुस्तकाध्यक्ष राम गोस्वामी का उद्गार इस प्रकार का है- 'भगवती प्रसाद भी हमारे साथ साहित्य चर्चा में भाग लेने के लिए आते थे। यह स्वीकार करना होगा कि हमारी

चिंता-चर्चा में वाम-मार्गी विचारधारा को प्राथमिकता मिलती थी। हम मार्क्सिय विचारधारा से प्रभावित हुए थे और अध्ययन भी करते थे। यदुनाथ सड़किया हमें इस विचारधारा की पाठ्य-सामग्री के बारे में बताते थे। गहन अध्ययन करने वाले व्यक्ति थे दधि महंत, खर्गेश्वर तामुली और धीरेन दत्त। वे प्रगतिशील विचारधारा के स्रोत मार्क्सिय साहित्य के बारे में काफी कुछ बताते थे। हमने विश्वविद्यालय में दोस्त्योयवस्की, ताल्सतोय और गोर्की के उपन्यासों का स्वाद पाया था। अवश्य हम राष्ट्रीय साहित्य के प्रति भी ध्यान देते थे। भगवती प्रसाद एक साहित्यानुरागी की हैसियत से इनमें भाग लेते थे। वालंटियर, रवींद्रनाथ के साथ-साथ असम के वैष्णव धर्म के प्रवर्तक श्रीमंत शंकरदेव के प्रति भी उनके मन में जिज्ञासा थी। आधुनिक एवं सांस्कृतिक मन के वे अधिकारी थे।' (साहित्य, 2001, पृ. 4-5)

□ हिंदी प्रचार के लिए सन् 1935 ई. में बिहार से ध्यानदास शर्मा और सन् 1938 ई. में उत्तर प्रदेश के बलिया से वैकुण्ठनाथ सिंह गोलाघाट आए थे। ये दोनों यद्यपि हिंदी प्रचार के निमित्त आए थे परंतु स्वतंत्रता आंदोलन के कार्यक्रमों में सक्रिय थे। भगवती प्रसाद इन दोनों के सान्निध्य से एक ओर हिंदी शिक्षा के प्रति जिस तरह प्रोत्साहित हुए थे, दूसरी तरफ स्वतंत्रता आंदोलन की अनेक गुप्त योजनाओं में भी सम्मिलित होने लगे थे। इस संदर्भ में भगवती प्रसादजी का संस्मरण इस प्रकार है- 'गोलाघाट के स्वतंत्रता आंदोलन को श्री शंकर बरुवा और श्री वैकुण्ठनाथ सिंह नेतृत्व दिया करते थे तथा हिंदी हाई स्कूल के अहाते में रहने वाले ध्यानदास जी की झोपड़ी में ही क्रांतिकारी आंदोलन की गुप्त गतिविधियां चलती थीं।'

(स्मृति अर्घ्य, 1973, पृ. 2-3)

□ भगवती प्रसादजी सत्रह-अठारह वर्ष की उम्र से अर्थात् 1937-38 ई. में दादी के गोला का दायित्व लेकर देखभाल करने लगे थे। उस समय यह बढ़िया फैसी कपड़े की दुकान थी। व्यवसाय के सिलसिले में भगवती प्रसाद को अक्सर कलकत्ता जाना पड़ता था। परंतु कलकत्ते जाकर उन्होंने व्यवसाई गतिविधियों के अतिरिक्त वहां की राजनैतिक हलचल के बारे में जानकारी ली थी। उन्हें कलकत्ते में सुभाष चंद्र बोस, डॉ. राजेंद्र प्रसाद, पंडित मदन मोहन मालवीय आदि के भाषण सुनने का अवसर मिला था। इससे उनका राजनैतिक चिंतन आंदोलित हुआ था। परंतु उनके मन में कभी राजनैतिक क्षमता पाने की आकांक्षा नहीं जगी।

सन् 1938 ई. कांग्रेस के लिए संकट का समय था। इस वर्ष हरिपुरा में आयोजित कांग्रेस अधिवेशन की अध्यक्षता सुभाष चंद्र बोस ने की थी। परंतु मतांतर

होने पर उन्होंने कांग्रेस त्याग कर 'फारवर्ड ब्लॉक' का गठन किया। सन् 1939 ई. में कांग्रेस के त्रिपुरी में होने वाले 54वां अधिवेशन और सन् 1940 ई. के 55वां अधिवेशन में अध्यक्ष होने के बावजूद त्यागपत्र दिया।

सन् 1939 ई. के सितंबर महीने में यूरोप में द्वितीय विश्व युद्ध प्रारंभ हुआ। जर्मन के हिटलर ने सर्वप्रथम पोलैंड पर आक्रमण किया। कुछ दिनों के बाद जापान ने जर्मन-इटली के पक्ष में और अमेरिका ने इंग्लैंड-फ्रांस के पक्ष में समर्थन दिया। भारत की ब्रिटिश सरकार ने भारतवासियों को इस युद्ध के लिए धन-जन से सहायता करने का आह्वान किया। किंतु गांधीजी एवं कांग्रेस ने साफ कहा- 'पहले हमें स्वतंत्रता दो, स्वतंत्र सरकार युद्ध में सहायता करने या न करने का फैसला करेगी।' ब्रिटिश के लिए 'not a person, not a pie to this imperialist war'- सिद्धांत द्वारा चलाए गए गांधीजी के सत्याग्रह का प्रभाव पूरे देश में पड़ा। ब्रिटिश प्रधानमंत्री चर्चिल ने कूटनीतिविद् स्टेफोर्ड क्रिपस को 'क्रिपस मिशन' का दायित्व देकर भारतीय नेताओं के साथ विचार-विमर्श करने के लिए भेजा।

ब्रिटिश सरकार का प्रस्ताव कांग्रेस ने स्वीकार नहीं किया, गांधी ने एक अभिनव कौशल अवलम्बन कर सत्याग्रह के लिए आह्वान किया। गांधीजी ने 'सत्याग्रही' की संज्ञा निरूपण करते हुए कहा कि उन्हें सत्य, न्याय और अहिंसा पर पूर्ण विश्वास रखना होगा; सभी पंक्तिता से मुक्त होना होगा। अतः सत्याग्रही का आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करने के लिए गांधीजी ने प्रथम सत्याग्रही के रूप में बिनोवा भावे का नाम प्रस्ताव किया।

असम में प्रथम सत्याग्रही 11 दिसंबर, 1940 ई. को लोकप्रिय गोपीनाथ बरदलैजी हुए। उस दिन से सन् 1941 ई. के मार्च तक यह सत्याग्रह आंदोलन चला। गोलाघाट में इस सत्याग्रह में भाग लेकर राजेंद्र नाथ बरुवा, सुरेन फुकन, कुशल कोंवर, वैकुंठनाथ सिंह आदि गिरफ्तार हुए।

□ भारतवर्ष में सत्याग्रह जारी रहने के समय सन् 1940 ई. में भगवती प्रसाद लडिया तुलसी गोसाईं के साथ कलकत्ता जाकर उस समय छात्र फेडरेशन का नेतृत्व करने वाले विश्वनाथ मुखर्जी को छात्र फेडरेशन के कार्यालय में भेंट करते हैं और असम की स्थितियों से अवगत कराते हैं।

सन् 1941 ई. में स्वगृह में नजरबंद रहने वाले सुभाष चंद्र बोस भारत से भागकर जापान पहुंचते हैं। वहां 'आजाद हिंद फौज' गठन कर शक्ति प्रयोग द्वारा भारत की आजादी के लिए अग्रसर होते हैं। जापान के युद्ध में यह सेना दल लड़ाई में भाग

लेते हुए असम सीमांत तक पहुंच गया था, परंतु अमेरिका के बमवर्षण से जापान को हार स्वीकार करना पड़ा और आजाद हिंद फौज का अभियान भी असफल हुआ।

□ सन् 1937 ई. में भगवती प्रसाद लडिया का विवाह हुआ था। उन पर परिवार का भारी बोझ पड़ा था। फिर भी वे स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय थे। वे अब कपड़े के व्यवसाय में व्यस्त हो गए। साथ ही पत्र-पत्रिकाएं पढ़ कर देश-विदेश के हालचाल से अवगत रहने लगे। स्वतंत्रता संग्रामियों ने लडियाजी का संग त्याग नहीं पाए। व्यवसायी होने पर भी भगवती प्रसाद धन के लोभी न थे, अपने व्यवसाय के माध्यम से समाज सेवा के प्रति ध्यान रखने के निमित्त सन् 1942 ई. के 'भारत त्याग' आंदोलन में वे स्वतंत्रता संग्राम की आड़ में सक्रियता से काम करते रहे।

भारत त्याग आंदोलन की पृष्ठभूमि : द्वितीय विश्वयुद्ध की पृष्ठभूमि में ही सन् 1942 ई. के 7 और 8 अगस्त में बंबई में आयोजित जातीय कांग्रेस के अधिवेशन में 'भारत त्याग' प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। ब्रिटिश को भारत त्याग करने के लिए बाध्य करने हेतु सत्याग्रहीगण 'करेंगे या मरेंगे' (Do or Die) संकल्प द्वारा नए जोश से स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़े। ब्रिटिश सरकार ने इसका प्रतिशोध लेने के लिए 9 अगस्त को गांधीजी, उनकी पत्नी कस्तूरबाई, वैयक्तिक सचिव, सरोजिनी नायडू, मीरा बेन, सुशीला नायर जैसे प्रथम पांक्तय के कांग्रेस नेताओं को बंदी बनाया। बंबई महासभा में भाग लेकर असम लौटने वाले गोपीनाथ बरदलै और सिद्धिनाथ शर्मा को 10 अगस्त को रेल में ही बंदी बनाया गया, उनके साथ जाने वाले कामिनी शर्मा के हाथ में पहले ही दे रखे भारत-त्याग प्रस्ताव संबंधी कागजात को जिसे शर्माजी ने चुपके से लाकर कांग्रेस कार्यालय को सौंप दिया। 'भारत त्याग' प्रस्ताव में कहा गया था- (क) भारतवर्ष को स्वतंत्रता देना और ब्रिटिश को भारत त्याग करना, (ख) मित्र पक्ष के युद्ध प्रयास में बाधा न पहुंचाना, (ग) सोवियत रूस और चीन के प्रतिरक्षामूलक कार्यों में बाधा न पहुंचाना, (घ) अहिंसा और शांतिपूर्ण आंदोलन में देश की जनता की भागीदारी इत्यादि। जेल जाने के पूर्व गांधीजी ने कहा था- 'तुम लोगों का आज कोई नेता नहीं है, तुमलोग सभी भारतमुक्ति के नेता हो। अपने विवेक के सहारे तुमलोग काम करते जाना।' असम में असम कांग्रेस के अध्यक्ष तैयबुल्ला, फकरुद्दीन अली अहमद, विष्णुराम मेधी, देवेश्वर शर्मा, डॉ. हरिकृष्ण दास, लीलाधर बरुवा आदि नेताओं को गिरफ्तार करने पर भग्न स्वास्थ्य से ही त्यागवीर हेमचंद्र बरुवा ने असम के बयालीस के आंदोलन को नेतृत्व प्रदान किया।

‘करेंगे या मरेंगे’ मंत्र से उज्जीवित होकर लाखों की संख्या में लोग राजमार्ग पर निकल आए। नर्म पंथ के कांग्रेसियों के जेल में बंद होने के कारण आंदोलन का नेतृत्व कांग्रेस-समाजवादियों के हाथों चला गया। उन्हें फारवर्ड ब्लॉक, आ.सी.पी.आई और क्रांतिकारी कांग्रेसियों का समर्थन मिला। इसके विपरीत इस आंदोलन का मुस्लिम लीग, हिंदू महासभा, कम्यूनिस्टों ने विरोध किया और जगह-जगह पर ब्रिटिश सरकार की सहायता की। सन् 1940 ई. से जयप्रकाश नारायण जेल में बंद होने पर भी उनके सहयोगी राम मनोहर लोहिया, अच्युत पटवर्द्धन, अशोक मेहता, अरुणा आसफ अली, कमला देवी चटर्जी, पुरुषोत्तम दास, त्रिकम दास, एम.एम. जोशी, सादिक अली, नाना पाटिल, एन.जी. गोड़े आदि ने गुप्त आंदोलन के द्वारा ब्रिटिश को मजा चखाने के लिए समूचे भारत में एक वृहत नेटवर्क तैयार किया। सबसे अचरज की बात तो यह है कि जयप्रकाश नारायण अपने पांच सतीर्थों के साथ हजारीबाग जेल से भाग निकले।

राम मनोहर लोहिया की प्रेरणा से राधाकृष्ण नेवतीया ने कलकत्ते से एक क्रांतिकारी विचारधारा का गुप्त पत्र निकाला था- ‘करेंगे या मरेंगे’ (Do or Die)। इसमें लोहिया, जयप्रकाश नारायण आदि ने देशवासियों को स्वतंत्रता के लिए अधिक उत्तेजित कर गण-संग्राम को अधिक तीव्र करने के लिए आह्वान किया था। व्यवसाय के सिलसिले में कलकत्ता जाने पर भगवती प्रसाद लडिया को इस पत्र का सुराग मिला था। लडियाजी ने गुप्त रूप में कपड़े के बीच छिपाकर इस पत्र को कलकत्ते से गोलाघाट मंगाने की व्यवस्था की थी। सन् 1938 ई. में वाममार्गी विचारधारा के हिंदी के ख्यातिप्राप्त लेखक यशपालजी (1903-1963) ने भी ‘विप्लव’ नामक एक पत्र निकाला था।

बयालीस में गोलाघाट की भूमिका : सन् 1942 ई. के ‘भारत त्याग’ आंदोलन में गोलाघाट महकमे की भूमिका भी प्रशंसनी रही। गांव-गांव में कांग्रेस वालंटियरों ने जुलूस निकाला था। 14 अगस्त के दिन गोलाघाट के राजेंद्र नाथ बरुवा के घर में कांग्रेस कार्यकर्ताओं की एक बैठक हुई, जिसमें इस आंदोलन के दौरान राजेंद्र नाथ बरुवा को गिरफ्तार करने के कारण कुशल कोंवर, नगेन चुतीया, ठगी गौ, गंधराम बरुवा आदि नेताओं ने आंदोलन का नेतृत्व स्वीकार किया। ‘करेंगे या मरेंगे’ के आह्वान पर महकमे में ‘मृत्यु वाहिनी’ का गठन किया गया, इस मृत्यु वाहिनी में क्रांतिकारियों ने योगदान किया और नर्म पंथ के लोग सभा-समिति करने लगे। क्रांतिकारियों ने महकमे के विभिन्न स्थानों में तोड़-फोड़ प्रारंभ करते हुए क्लबघर,

बगीचे के मैनेजर का बांग्लो, डाकघर आदि जला दिया। गोलाघाट के यूरोपीय क्लबघर को 21 दिसंबर, 1942 को भस्मीभूत कर दिया गया।

आंदोलन को नेतृत्व प्रदान करने के लिए शंकर चंद्र बरुवा, वैकुण्ठनाथ सिंह आदि नेतागण भूमिगत होने पर विद्यालय के अहाते में रहने वाले ध्यानदास शर्माजी का निवास आंदोलन का गुप्त केंद्र बन गया। देरगांव में आम जनता पर पुलिस द्वारा किए गए निर्मम अत्याचार का विरोध करने पर नरेंद्र नाथ शर्मा को गिरफ्तार किया गया। सन् 1942 ई. के 3 सितंबर को कमल मिरि को गिरफ्तार करके जोरहाट जेल में रखा गया। ऊपरी असम के गण-आंदोलन को गुप्त रूप से नेतृत्व देने वाले शंकर चंद्र बरुवा सरकार की आंख का कांटा बन गए। इसीलिए बरुवाजी को पकड़वाने वाले पर दस हजार रुपए इनाम घोषित किया गया।

द्वितीय महासमर के दौरान सन् 1941 ई. में हिटलर वाहिनी द्वारा समाजतांत्रिक देश रूस आक्रमण करने पर भारत के कम्यूनिस्टों ने इसे ‘जनयुद्ध’ नामकरण कर ‘भारत त्याग’ आंदोलन का विरोध किया और अंग्रेजों को सहायता पहुंचाना स्वीकार किया। इसका कारण था कि इंग्लैंड ने अमेरिका और रूस से मित्रता करके जर्मन, जापान और ईटली के खिलाफ फैसीवादी युद्ध में हिस्सा लिया था। इससे कांग्रेस आंदोलन पर एक नकारात्मक प्रभाव पड़ा, क्योंकि कम्यूनिस्ट कांग्रेस से अलग हो गए थे। गोलाघाट में भी वामपंथियों ने एक ही रास्ता अपनाया। इस संबंध में वामपंथियों से शुरू में मिलने-जुलने वाले राम गोस्वामी का मंतव्य इस प्रकार का है:

सन् 1942 ई. में हमने वामपंथी शिविर से अलग होकर स्वतंत्रता संग्राम में हिस्सा लिया था। नीति के विषय पर कम्यूनिस्ट बंधुओं से हमारा मतभेद हुआ था। बयालीस के आंदोलन में हमें गुप्त रूप से अनेक काम करना पड़ा था। जननेता शंकर चंद्र बरुवा के घर में हमारी गुप्त बैठकें होती थीं। वैकुण्ठनाथ सिंह हमारे प्रशिक्षक थे। भगवती प्रसाद गांधीवादी विचारधारा के होने के कारण हमारे कुछ कार्यों का वे समर्थन नहीं करते थे। ऐसा होने पर भी उनसे हमारे विचारों का आदान-प्रदान बंद नहीं हुआ था। बयालीस के कुछ विषयों में जुड़े होने पर पुलिस द्वारा किए गए संदेहों के निमित्त उन्हें भूमिगत होना पड़ा था।

□ भगवती प्रसाद लडिया ने व्यक्ति को महत्व दिया था। उनके अनुसार व्यक्ति हर दल से ऊपर है। गोलाघाट के कम्युनिस्टगण एक समय में उनके अच्छे मित्र थे, परंतु आदर्शगत कारण से वे कांग्रेस से अलग हो गए थे। कांग्रेसी होने पर भी भगवती प्रसादजी ने कभी उनका विरोध नहीं किया था, कोई शिकायत करता तो उन्हें अच्छा नहीं लगता था। उनका कहना था कि सभी लोग स्वतंत्रता चाहते हैं। लडियाजी गांधीजी के अहिंसा नीति के पक्षधर होने के कारण तोड़-फोड़ वाले कार्यों का समर्थन नहीं करते थे।

□ सन् 1942 ई. के 'भारत त्याग' आंदोलन में घटित सभी घटनाओं से लडियाजी प्रत्यक्ष-परोक्ष रूप से जुड़े थे। शंकर चंद्र बरुवा, सुरेन फुकन, वैकुंठनाथ सिंह आदि के साथ वे भी भूमिगत हुए थे।

□ सन् 1942 में भूमिगत नेताओं की गुप्त सूचनाएं आदान-प्रदान करने में भगवती प्रसादजी मददगार होने पर पुलिस की नजर उन पर भी पड़ी थी। इसलिए बीच-बीच में लडियाजी गोलाघाट से दूर जाकर कलकत्ता-कानपुर आदि में रहने लगे थे।

□ कलकत्ता में रहते समय भगवती प्रसाद ने जयप्रकाश, राम मनोहर लोहिया के आदर्शपुस्त 'करेंगे या मरेंगे' (Do or Die) पत्र प्राप्त किया था। इसे उन्होंने गुप्त रूप से गोलाघाट लाने की व्यवस्था की थी। पत्र गोलाघाट पहुंचते ही लडियाजी इसे धीरेन दत्त द्वारा अनूदित कराकर यदुमणि छापाखाना पहुंचाते थे, जहां रात को पूर्णचंद्र गोस्वामीजी कंपोज करके अपने ट्रेडिल मशीन में छापकर वितरण के लिए तैयार रखते थे। गुप्त रूप से यह पत्र कार्यकर्ताओं तक पहुंचाने का काम भगवती प्रसाद करते थे, प्रायः कपड़े के बीच में छिपाकर ले जाते थे।

□ बयालीस के आंदोलन में लडियाजी बाईस वर्ष के युवा थे। वे बड़े उत्साह से गुप्त सूचनाएं कार्यकर्ताओं तक पहुंचाने का काम करते थे। परंतु गुप्तचरी विभाग से पुलिस को यह सूचना मिली कि लडियाजी सरकार के खिलाफ काम कर रहे हैं। इस संदर्भ में लडियाजी ने एक वाक्या अपने शिष्य नागेंद्र शर्मा जी को सुनाया था, जो इस प्रकार है :

“एक दिन एक गोरा पुलिस वाला घोड़े पर सवार होकर आया था और उसके साथ एक असमीया सिपाही भी था, जिसकी उपाधि गोगोई थी। गोरे सिपाही ने अपने साथ आए सिपाही को भीतर तलाशी लेने का हुक्म दिया और खुद दुकान को सरसरी निगाह से देखकर एक बेंच पर बैठ गया। अचानक उसकी निगाह गद्दी पर पड़ी एक अंग्रेजी मैगजीन पर पड़ी। गोरा सिपाही उसे उठाकर पन्ने पटलने लगा। एकाएक उठ

खड़ा हुआ और पूछा, यह मैगजीन तुम्हारे पास कहां से आई। स्व. लडियाजी ने कहा एक बार मैं कलकत्ता गया था तो वहीं से खरीद लाया। अरे, यह तो हमारे देश की मैगजीन है। इसमें तो लिखा है इंडियन लोग पर कैसे राज करना है। इंडिया के इन्डिपेंडेंस एजिटेशन को कैसे सप्रेस करना है। तुम यह सब पढ़ता है। तुम हमारा खिलाफ कुछ नहीं करता, फिर बुदबुदाया... ऑल रांग इंफोर्मेशन ब्लडीफुल। उधर भीतर से गोगोई सिपाही गर्दन झुकाए बाहर आकर बोला- सा 'ब कुछ नहीं मिला। उसका चेहरा उतरा हुआ व बिल्कुल उदास था। लडियाजी बिल्कुल हैरान। यह चमत्कार कैसे हो गया? भीतर तो सब कुछ बिखड़ा पड़ा था। 'करो या मरो' का असमीया अनुवाद छपकर थोड़ी देर पहले ही तो आया था।

लडियाजी ने पत्नी भगवती देवी से पूछा- क्या हुआ वह सिपाही मुंह लटकाए भीतर से कैसे चला आया? तुमने कोई उसे घूस तो नहीं दे दी। पत्नी भगवती देवी का जवाब था- घूस देने के लिए मेरे पास पैसे कहां से आते। आपसे कभी चार आने मांगती हूं तो नहीं देते। मैं तो प्रेस से जो कागज आए थे उनमें से एक को देख रही थी। उसमें गांधीजी की फोटो छपी थी उसी को देख रही थी। वह सिपाही इधर-उधर कुछ ढूंढ रहा था। मैंने कहा- दादा, क्या ढूंढ रहे हो? आज प्रेस से जो कागज आए हैं उनको ढूंढ रहे हो तो एक तो मेरे पास है यह ले लो। लडियाजी ने अपना माथा ठोंक लिया। लडियाजी अपनी पत्नी से बोले- तुमने तो मेरी गिरफ्तारी का वारंट ही उसके हाथ में दे दिया। भगवती देवी के अनुसार उस सिपाही ने एक काठ की बाक्स पर बैठकर सारा पेपर पढ़ डाला और बोला बाईदेव मुक खमा करिबो, आमि भूल पथे गोई आसिलू। यह कहकर वह बाहर निकल आया।

यह वाक्या सुनकर लडियाजी ने कहा- शायद यह गांधीजी का कमाल था। मैं उस दिन के बाद से गांधीजी को मानव नहीं बल्कि कोई अवतार मानता हूं। गांधी जी को बापू, महापुरुष, अहिंसा के पुजारी, निस्पृह फकीर आदि कई नामों से पुकारते हैं। लेकिन लडियाजी अकेले ऐसे व्यक्ति थे, जिन्होंने गांधीजी को मानव नहीं बल्कि एक अवतार माना। उन्होंने मुझसे साफ कहा कि गांधीजी यदि दूर भी हों तो देशभक्तों के पास ही रहते हैं।”

(दैनिक पूर्वोदय, 3 सितंबर, 2006 ई.)

□ गोलाघाट में क्लबघर जलाना आदि तोड़-फोड़ का काम होने पर अंग्रेज सरकार ने गोलाघाटवासियों पर जुल्म ढाया, दस हजार रुपए सार्वजनिक जुर्माना लगाया, वालंटियरों के घर में तलाशी ली। विशेषतः शंकर चंद्र बरुवा के घर में ज्यादा अत्याचार

क्रिया, पुलिस के अत्याचारों से पीड़ितजनों के पास जाकर भगवती प्रसादजी सांत्वना देते थे और उनकी सहायता करते।

रेल गिराने वाली घटना : 'भारत त्याग' आंदोलन का सहारा लेकर कुछ क्रांतिकारियों ने तोड़-फोड़ को आजमाया। युवा वालंटियरों में कुछ 'शांति वाहिनी' और कुछ 'मृत्यु वाहिनी' के सदस्य बने। मृत्यु वाहिनी के कार्यकर्ता उग्र स्वभाव के होने के कारण वे अनेक प्रकार के विघटन कार्यों, जैसे- आग लगा देना, घर जलाना, रेल गिराना आदि में लिप्त हुए थे।

कामरूप जिले में सेना की रेलगाड़ी को सन् 1942 ई. के 24 नवंबर को पानीखाइती और पानबाड़ी के बीच गिराया गया था, जहां ड्राइवर, फायरमैन और चार सैनिकों की मौत हुई थी, अन्य 41 लोग आहत हुए थे। तोड़-फोड़ का काम सन् 1943 ई. के जनवरी में पातियागांव और गोसांइगांव के बीच तथा सन् 1943 ई. के 9 मार्च तारीख को रंगिया में संघटित होने पर दो लोगों की मौत हुई थी। नगांव जिले के रेल-पटरी का एक अंश कामपुर और यमुनामुख तथा पुरानीगुदाम में सन् 1942 ई. के 24-25 अगस्त को हटाया गया था। एक मालगाड़ी 24 अगस्त को बेबेजिया के पास और अन्य एक गाड़ी 25 अगस्त को कामपुर के पास पटरी से उतारी गई थी। दरंग जिले में मंगलदै और आसपास के पुल तोड़कर परिवहन को बाधा पहुंचाई गई थी। सन् 1943 ई. के 27 जनवरी को ऊर्ध्वगामी आसाम मेल के तीन डिब्बे लाकवा और सफ्राई के बीच पटरी से उतारा गया था, जहां ग्यारह की मौत हुई और पच्चीस घायल हुए थे। इसके अधिकांश सेना विभाग के लोग थे। सन् 1943 ई. के 22-23 फरवरी को तिताबर में एक दुर्घटना बाल-बाल होने से बच गई। इसी तरह बराक घाटी में भी 1942 ई. के 11 नवंबर को इटाखोला में एक रेल पटरी से उतारी गई थी, जिसमें दस लोगों की मौत हुई थी और अन्य छत्तीस लोग गंभीर रूप से घायल हुए थे। पुलिस इन घटनाओं में किसी दोषी को पकड़ नहीं पाई, परंतु गोलाघाट के सरुपथार में रेल गिराने वाली घटना अपवाद है।

शिवसागर जिले के तिताबर के पास के काछजान में सन् 1942 ई. के 10 अक्टूबर को एक रेल गिराई गई थी और उसी दिन सेना की एक विशेष रेल को गोलाघाट के पास सरुपथार में गिराई गई। गोलाघाट के पंडितजी वैकुंठनाथ सिंह की अगुवाई में यह कार्य किया गया था, जिसमें धर्मकांत डेका, कनकेश्वर कोंवर, घनश्याम सड़किया, नगेन चुतीया, इंद्रेश्वर फुकन, पदमसुख अग्रवाल आदि सहयोगी बने। सरुपथार के प्राथमिक कांग्रेस कार्यालय में प्राप्त कुछ दस्तावेजों के आधार पर

संदेहवश पुलिस ने काफी लोगों की गिरफ्तार की थी। गांव के मुखिया और एक साक्षी के आधार पर सरुपथार कांग्रेस समिति के मंत्री कुशल कोंवर को गिरफ्तार किया गया था। वैकुंठनाथ सिंह स्त्री वेश में एक बैलगाड़ी पर चढ़कर भाग गए, सुरेन फुकन और सोनेश्वर बरा भी भूमिगत हुए। सन् 1943 ई. में कमारबंधा के ठगीराम बरा के घर से वैकुंठनाथ सिंह को गिरफ्तार किया जाता है।

उस समय सरुपथार दूरवर्ती स्थान होने पर कलकत्ता उच्च न्यायालय के दायरे से बाहर था। इसीलिए शिवसागर जिला के मजिस्ट्रेट को न्यायिक कार्य करना पड़ा था। विभिन्न साक्षियों के साक्ष्यों के आधार पर सरुपथार कांग्रेस समिति के मंत्री कुशल कोंवर, धर्मकांत डेका, कनकेश्वर कोंवर, घनश्याम सड़किया, नगेन चुतीया और इंद्रेश्वर फुकन को मूल दोषी करार देकर आई.पी.सी. 107 धारा, भारतीय रेल की 126 धारा के डी.आई.आर. 35 नियम डाल देते हैं। इनमें से प्रथम चार को मूल दोषी मानकर फांसी तथा अन्य दो को दस वर्ष के कारावास के दंड दिए जाते हैं।

फैसले में कहा जाता है कि इन अपराधियों के साजिश में प्रत्यक्ष भाग लेने का गवाह न मिलने पर भी परिस्थितिजन्य साक्ष्य के आधार पर तोड़-फोड़ करने के अपराध में इन्हें दृष्टांतमूलक दंड देना चाहिए।

शिवसागर जिला के जिलाधिपति एवं इस मुकदमे के न्यायाधीश सी.ए. हामफ्रे द्वारा जारी ऐतिहासिक फैसले के अंशविशेष इस प्रकार है; ध्यातव्य है उस समय भूमिगत रहने वाले वैकुंठनाथ सिंह के लिए पंडितजी अभिधा प्रयोग किया गया है :

In all these cases I am convinced that the accused are guilty and consider that this amount of corroboration of the approver's evidence is sufficient to prove their guilt.

It seems to me to be clear that main leaders were Kushal Chandra Konwar and Dharma Kanta Deka and absconders Panditji and Suren Phukan. And also that Thopor and Kanakeshwar Konwar were also leaders although not to the same extent. Naga and Indreswar Phukan seem to me to be much less important than some members of the gang against which there is no sufficient evidence to convict. They are part of the rank and file. Dhaneswar Gogoi is not very bright boy who was I think dominated by Kushal and is not much more than his servant.

All these seven accused are convicted of abetting an offence that the accused damage to the railways and also of endangering the safety of persons travelling on the railway and so punishable under Sec. 126 of the Indian Railway Act and Sec. 35 of the Defence of India Rules-read with ordinance III of 1942.

Only the maximum sentence appears to be proper in case of Kushal Chandra Konwar and Dharma Kanta Deka and Kanakeswar Konwar and Thopor alias Ghanashyam Saikia and under Sec. 109 IPC I direct that they be hanged by the neck till they are dead.

In view of their youth and unimportance Naga alias Nagen Chutia and Indreswar Phukan are subject to confirmation each sentenced to 10 years R.I.

In view of all the circumstances I think that although he is convicted of an offence punishable by death as this Mikir Hills case Dhaneswar Gogoi can be dealt with under sec. 562 cr. P.c. I therefore direct that he should execute a bond of Rs. 500/- with a surety of 500/- to appear when called upon to receive sentence during the next 3 years and in the meantime to keep the peace and be of good behavior. The approver is discharged and the remaining accused acquitted.

Sd/- C.A. Humphrey
Deputy Commissioner, Sibsagar

6.3.43

उस समय भूमिगत होने वाले शंकर चंद्र बरुवा के बारे में हामफ्रे के फैसले में कहा गया है कि वे किसी साजिश में शामिल नहीं थे, केवल नवीन नामक व्यक्ति की दुकान के सामने 'शांति सेना' में योगदान के लिए उन्होंने आह्वान किया था (नवीन तामुली की एक घड़ी की दुकान थी)।

□ There was a meeting last jeth in front of a shop kept by one Nabin. This was addressed by Shankar Barua, the congress M.L.A. There was no talk of sabotage in this meeting only that people should enrol themselves in Santi Senas and also grow

more food etc. Before this there was no Congress office there, nor apparently was there any Congress organisation. The approver was enrolled as a 4 anna member of the party along with others.

शंकर चंद्र बरुवा की तुलना में पंडितजी यानी वैकुंठनाथ सिंह ने मृत्यु वाहिनी और रेल यात्रा व्याहत करने की बात कही थी, तदुपरांत इस विषय में कुशल चंद्र कोंवर से मंत्रणा करने के विषय में भी संकेत दिया था; हामफ्रे का पर्यवेक्षण इस प्रकार है :

□ Then after 3 months after the first meeting and about 3 weeks before the occurrence there was another meeting in a Marwari's two storied house. Here one Baikuntha Nath Singh (usually known as Panditji) addressed the meeting. Beside the usual Congress Programme, he said that people must do their duty if necessary by dying and that the railways should be made impassable. He also said he would leave instructions with Kushal as to how this was to be done, also a similar meeting in Birdhan's Namghar.

(source : G.R. No. 304 of 1942 of Golaghat Court K.E. Vs. Kushal Konwar and others.)

सरुपथार की रेल दुर्घटना में किसी को कोई नुकसान न पहुंचने पर भी कुशल कोंवर, धर्मकांत डेका, कनकेश्वर कोंवर और घनश्याम की फांसी का आदेश जारी किया गया। आसामी पक्ष के वकील थे गोपिकावल्लभ गोस्वामी, गंगाधर बरठाकुर, तारा प्रसाद बरुवा, राधिकानाथ गोस्वामी और विपिन फुकन। सरकारी वकील थे देवेश्वर शर्मा। इसी तरह वैकुंठनाथ सिंह के लिए दौलेश्वर दत्त, भगवती प्रसाद लडिया, गजानन जालान और मोहन प्रसाद राय ने गुवाहाटी के विशिष्ट वकील रोहिणी कुमार चौधुरी को नियुक्त किया था। इसी रेल गिरानेवाले मुख्य साजिशकर्ता वैकुंठनाथ सिंह होने के बावजूद वे बच गए। कुशल कोंवर सहित अन्य चार अभियुक्तों की फांसी का आदेश होने पर भारत के वाइसराय के सामने इस आदेश को रद्द करने की प्रार्थना की गई, जिसमें कुशल कोंवर को छोड़कर अन्य चार के दंड में परिवर्तन कर दस वर्ष सजा का नया आदेश जारी किया गया। कुशल कोंवर को मुख्य हत्याकारी करार देकर उनकी फांसी का आदेश बरकरार रखा गया। कुशल चंद्र कोंवर को सन् 1943 ई. के 15 जून को सुबह में जोरहाट कारागार में फांसी दी गई।

□ सरुपथार रेल दुर्घटना के लिए धड़-पकड़ होने पर भगवती प्रसाद लडिया अपने पैत्रिक गांव राजस्थान के मंडावा चले गए। वहां वे सामाजिक कार्यों में जुटे रहे। शंकर चंद्र बरुवा भी भूमिगत होकर इसी दौरान जयप्रकाश नारायण, राम मनोहर लोहिया आदि से भेंट किए, साथ ही ज्योतिप्रसाद अग्रवाला से भी।

□ भूमिगत अवस्था में भी शंकर चंद्र बरुवा का भगवती प्रसाद लडिया गुप्त संवाद बना रहा। बरुवाजी रूपए-पैसे या आंदोलन संबंधी गुप्त दस्तावेज लडियाजी को देते थे। इनमें दो-चार पत्र चक्रेश्वर सड़किया के लिए भी होते थे। उन्हें गुप्त रूप में प्रदान करने का दायित्व लडियाजी पर था।

बयालीस के आंदोलन में भगवती प्रसाद लडियाजी की भूमिका पर गोलाघाट के डॉ. अजित बरुवा का संस्मरण इस प्रकार है :

ऐसे एक संकट की घड़ी में कारागार के बाहर रहकर सार्वजनिक स्तर पर देशप्रेम की आग को जलाए रखने के लिए बीड़ा उठाने, ब्रिटिश वाहिनी की आंखों में धूल झोंककर अपने जीवन को संकट में डालने वालों की उपेक्षा नहीं की जा सकती। भगवती प्रसादजी ने क्रांतिकारियों का योगसूत्र बनकर जयप्रकाश-लोहिया का गुप्त हिंदी पत्र असमीया में अनुवाद कराकर गांवों-गांवों में जाकर वितरित करने का ही काम नहीं किया, बल्कि बयालीस के इस साढ़े तीन वर्षों के जोखिमपूर्ण समय में अपने जीवन को संकट में डालकर क्रांतिकारी नेताओं, कार्यकर्ताओं के प्रति अपना सहयोग भी प्रदान किया था। बयालीस के आंदोलन के समय ब्रिटिश का पक्षधर बनकर रातभर में साम्राज्यवादी युद्ध को 'जनयुद्ध' कहने वाले लोग आजकल बयालीस की क्रांति को 'रोमांटिक' आख्या देते हैं। किसी को बड़ा बनाने के फेर में किसी को छोटा बनाने की अपचेष्टा करते हैं। विषयज्ञान से अनिभङ्ग पाठकों को स्वतंत्रता संग्राम तथा बयालीस की क्रांति के संबंध में पक्षपातपूर्ण तथा प्ररोचनामूलक वर्णन देने वालों को स्वतंत्रता संग्राम में उनकी क्या भूमिका थी पूछने पर निरूत्तर हो जाते हैं। परंतु ऐसे समय में भगवती प्रसाद लडिया की अनन्य भूमिका रही है। असम के खास अनेक असमीया ने स्वतंत्रता संग्राम को लाठी से पर्वत ढकेलने के लिए जाना कह कर व्यंग्य किया था, परवर्ती समय में मुक्ति योद्धा पेंशन, ताम्रपत्र लेने वाले

बहुतों ने जब घर से निकलने का साहस नहीं किया था, तब भगवती प्रसाद लडिया, ध्यानदास शर्मा, गजानन जालान, पदुमचोख अग्रवाला, हरेन सेन आदि कई गैर असमीया व्यक्तियों का योगदान महत्वपूर्ण था।

(आरावलीर परा धनशिरी लै, पृ. 18-19)

बयालीसोत्तर आंदोलन में लडियाजी की भूमिका : बयालीस के 'भारत त्याग' आंदोलन की करुण परिणति गोलाघाटवासियों को सहना पड़ा था- अनेक अत्याचार सहने के अतिरिक्त सन् 1943 ई. के 15 जून को कुशल कोंवर को दी जाने वाली फांसी अन्यतम है। इससे दूसरों की तरह भगवती प्रसाद लडिया भी व्यथित हुए थे, क्योंकि वे जानते थे अत्यंत शांत प्रकृति के सरुपथार कांग्रेस के मंत्री कुशल कोंवर निर्दोष थे, रेल गिराने वाले कार्य में उनका कोई योगदान नहीं था। इसीलिए उस दिन भगवती प्रसादजी ने अनशन द्वारा इस घृण्य-कृत्य का प्रतिवाद किया था :

जिस दिन शहीद कुशल कोंवर को फांसी दी गई थी, उस दिन इस भगवती प्रसाद लडिया के नेतृत्व में गोलाघाट में गांधीजी के आगमन स्थल पर (कांग्रेस ऑफिस के सामने) दो दिन अनशन सत्याग्रह किया गया, जिसमें स्कूल-कॉलेज के विद्यार्थियों ने भी स्वतः आकर भाग लिया था।

(अपूर्व बरुवा, गोलाघाट; आरावलीर परा धनशिरी लै. पृ. 6)

बयालीस के पीड़ितों के लिए जिनता संभव हो सके भगवती प्रसाद ने किया था, उन्हें सहायता पहुंचाने का कार्य किया था; तदुपरांत गांधीजी के रचनात्मक कार्यक्रमों में अन्यतम खादी का प्रचार किया था, एतद् विषयक गोलाघाट के स्वतंत्रता संग्रामी अपूर्व बरुवा के दो वाक्ये इस प्रकार हैं :

□ हम बचपन से ही भगवती वालंटियर को पहचानते हैं, क्योंकि 'मुट्टी-भिक्षा' का कलश घर-घर ले जाकर संग्रह करने का काम वे करते थे, विशेषतः बाजार इलाके में और हमारे इलाके में मुक्तियोद्धा उमा बरुवा करते थे। इस तरह वालंटियर घर-घर जाकर मुट्टी-भिक्षा का चावल इकट्ठा करते थे और मुक्तियोद्धा केदार हजारिका उसे कांग्रेस ऑफिस में जमा करके भंडारा करते थे, हमने बचपन में यह देखा था।

□ इसके बाद यह भगवती वालंटियर खादी कपड़े की दुकान करते हैं और कांग्रेसी टोपी, चरखा लगा हुआ तिरंगा उनके पास उपलब्ध होने के कारण देश के कार्यकर्ता वहां एकत्रित होते थे और दूर-दूर से आने वाले लोगों ने आंदोलन की जानकारी प्राप्त करते थे। अब जैसे गमछा ओढ़कर स्वागत किया जाता है, उस समय गांधी टोपी आपस में पहना कर स्वागत किया जाता था। लडिया के उस समय के खादी भंडार में वर्धा से लाए जाने वाली टोपियां और विभिन्न प्रकार के चरखे का फ्रेम उपलब्ध होते थे। छात्र-कांग्रेस वाले वहां से वर्धा की कीमत पर खरीदते थे। इस खादी दुकान में चरखे से या हाथ से काटे जाने वाले सूत को भी जमा करके वर्धा तक भेजने की व्यवस्था थी। इस भंडार में ही मरतीब के स्वर्गीय मुक्तियोद्धा केकाइ सोनोवाल (खुमटाई), आपिराम गगै (बरपथार), हरेन्द्र दे, गोकुल हाजरिका, हलिराम पात्र बरा, वैकुंठनाथ सिंह, उगीराम बरा, भोगेश्वर बरा आदि को हम सहसा देखते थे।

(वही, पृ. 5)

वस्तुतः लडियाजी ने स्वतंत्रता संग्राम की आड़ में गुप्त कार्यों को किया था, दुर्गतजनों को सहायता पहुंचाया था और गांधीजी के रचनात्मक कार्यों में खादी व स्वदेशी का प्रचलन और राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार में अपने को समर्पित किया था।

द्विखंडित स्वतंत्रता : 'भारत त्याग' आंदोलन के बारे में प्रस्ताव लेने पर गांधीजी, राजेंद्र प्रसाद आदि नेताओं को गिरफ्तार किया गया। सन् 1944 ई. के 5 मई को अस्वस्थ होने पर गांधीजी को मुक्त कर दिया गया था। सन् 1945 ई. में वाइसराय वेभेल का भारतीय नेताओं के साथ एकत्रित रूप में भारत को स्वतंत्र करने का विचार-विमर्श असफल हुआ। वेभेल ने सोचा था कि हिंदू-मुसलमानों के बीच समझौता न होने पर स्वतंत्रता प्राप्त करने पर भी रक्तपात होगा। इसीलिए उन्होंने चाहा था कि अंग्रेजों को जल्दी भारत त्याग नहीं करना चाहिए। परंतु विभिन्न स्थितियों का आकलन करके इंग्लैंड के प्रधानमंत्री एटली ने सन् 1947 ई. के 20 फरवरी को घोषणा की कि जून, 1948 ई. के पूर्व भारत को आजाद किया जाएगा। इस उद्देश्य से 24 मार्च, 1947 ई. को वाइसराय लॉर्ड माउंटबेटेन भारत पधारे।

माउंटबेटेन ने दिल्ली के कार्यकारी परिषद (Executive Council) में गृह

मंत्री रहने वाले सरदार वल्लभभाई पटेलजी को देश-विभाजन की योजना समझाया। केवल चार-पांच दिनों में पटेल और नेहरूजी ने इस विभाजन का समर्थन किया। गांधीजी ने विभाजन का विरोध किया था। माउंटबेटेन सन् 1947 ई. के मई महीने में इंग्लैंड जाकर विभाजन के बारे में विस्तार से विचार-विमर्श करके सन् 1947 ई. के 30 मई को भारत लौट आये। उन्होंने सन्, 1947 ई. के 3 जून को भारत, पाकिस्तान और प्रायः 600 देशीय राज्यों को खंड-खंड करके बांटने की घोषणा की। सन् 1947 ई. के 14 जून तारीख को आयोजित कांग्रेस की कार्यकारिणी में विभाजन के पक्ष में पटेल, नेहरू और गोविंद वल्लभ पंत ने सभी को समझाने का प्रयास किया, परंतु कार्यकारिणी में इसका विरोध हुआ। अंत में वोट लेने पर विभाजन के पक्ष में 29 सदस्यों और विरोध में 24 सदस्यों ने वोट डाला। कांग्रेस ने विभाजन के पक्ष में सहमति जताने पर सन् 1947 ई. के 15 अगस्त को भारत द्विखंडित होकर स्वतंत्र हुआ।

भारतवर्ष के अन्यान्य स्थानों की तरह गोलाघाट में स्वतंत्रता दिवस को उल्लास से मनाया गया। महात्मा गांधी के अनुयायी भगवती प्रसाद लडिया उस समय सत्ताईस वर्ष के युवक थे, मन में भारत द्विखंडित होने पर कष्ट तो पाया परंतु स्वतंत्रता आंदोलन में सताए जाने वाले कार्यकर्ताओं को कुछ करने का शेष रह नहीं गया था। उस दिन स्वयं गांधीजी ने हिंदू-मुसलमान की एकता के लिए नोवाखाली में अनशन किया था।

गोलाघाट में गांधीजी का चिता-भस्म : स्वतंत्रता आंदोलन का स्वाद अभी मिटा भी न था कि सन् 1948 ई. के 30 जनवरी को प्रार्थना सभा के अंत में दिल्ली में एक आततायी की गोली से राष्ट्रपिता गांधीजी की हत्या कर दी गई। इससे भारतवासी शोक में डूब गए। असम के प्रधानमंत्री गोपीनाथ बरदलै जैसे नेता टूट गए। असमवासी को जोर का धक्का लगा।

30 जनवरी, 1948 ई. से 13 दिनों तक राष्ट्रीय शोक पालन किया गया। 12 फरवरी, 1948 ई. को प्रयाग की त्रिवेणी सहित सभी स्थानों में गांधीजी का चिता-भस्म विसर्जन देने का निर्णय लिया गया।

दिल्ली में राज्यपालों के सम्मेलन में भाग लेने के लिए जाने वाले असम के राज्यपाल सर अकबर हैदरी गांधीजी का सामान्य चिता-भस्म लेकर सपत्नीक असम लौट आए। 5 फरवरी, 1948 ई. को गुवाहाटी पहुंचकर वे गाड़ी से शिलांग चल पड़े। गांधीजी का चिता-भस्म रखने वाला ताग्रघट को शिलांग में प्रधानमंत्री बरदलै

के आवास के एक विशेष प्रार्थना कमरे में रखा गया।

सन् 1948 ई. के. 12 फरवरी को असम सरकार ने सरकारी बंद की घोषणा कर दी। गुवाहाटी में लोकप्रिय गोपीनाथ बरदलै ने वेद मंत्रों के बीच शुक्रेश्वर घाट पर चिता-भस्म को ब्रह्मपुत्र में विसर्जित किया।

गोलाघाट में चिता-भस्म पहुंचने पर जो स्थिति बनी और उसमें भगवती प्रसाद लडियाजी की जो भूमिका रही उसे गोलाघाट शहर के एक प्रत्यक्षदर्शी श्री अूपर्व बरुवा का संस्मरण इस प्रकार है-

जब गांधीजी का चिता-भस्म गोलाघाट पहुंचा, तब उसे रात-दिन धूप-धूना जलाकर भजन-कीर्तन करके रखने का दायित्व भगवती प्रसाद लडिया और स्वर्गीय राम बरुवा पर पड़ा था। उसके बाद इस चिता-भस्म को लेकर लंबी शोभायात्रा द्वारा (प्रायः तीन-चार मील लंबी) देरगांव के चिकारीघाट में जाकर विसर्जित करने का दायित्व भगवती प्रसाद लडिया, स्वर्गीय विष्णु राम काकती, राम बरुवा, कार्तिक मरान, नरेन शर्मा, हेमप्रसाद सड़किया, डिम्बेश्वर मिरि बरुवा आदि विशिष्ट व्यक्तिगण पर था। सामने राजेन बरुवा, देवेश्वर राजखोवा, चानु खेरिया, तारा प्रसाद बरुवा आदि को चिता-भस्म के साथ पदयात्रा करते हुए हमने देखा था।

आज भी इस पदयात्रा में 15 मील पैदल चलकर 'गांधीजी अमर रहे', 'गांधीजी जिंदाबाद' आदि ध्वनि एवं महिलाओं द्वारा रामधुन गाने का दृश्य आंखों के सामने तैरने लगता है। रास्ते में चना, केले आदि देने का दायित्व भगवती प्रसाद लडिया, राम बरुवा, विष्णु काकती, विष्णु दत्त आदि ने निभाया था। अनेक नाम अभी भूल चुका हूं परंतु वह अभावनीय दृश्य अब भी मेरी आंखों के सामने है। साथ जाने वालों में से और कुछ नाम हैं- पोषेश्वर बरा, ननीगोपाल बरठाकुर, तबिउल हुसैन, रजत तामुली, नवीन तामुली, दीप्ति बरुवा आदि सहपाठीगण।

(आरावलीर परा धनशिरा लै, 2006 ई., पृ. 6)

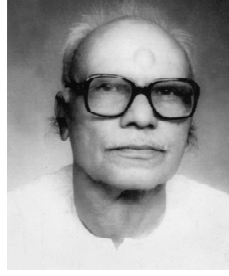
निष्कर्ष : मौन कार्यकर्ता कभी अपना नाम-यश की आकांक्षा नहीं करता, निस्वार्थ भाव से देश की सेवा करने वाला देश भक्त भी कभी प्रतिदान नहीं चाहता है। गोलाघाट के भगवती प्रसाद लडियाजी भी ऐसे गुण संपन्न स्वतंत्रता संग्रामी व्यक्ति

थे। अपने व्यवसाय के समानांतर कारागार के बाहर रहकर गुप्त संदेश पहुंचाना, सताने वाले को सहायता प्रदान करना, गांधीजी के रचनात्मक कार्यक्रमों को दृढ़ता से आगे बढ़ाने वाले अथक कार्यकर्ता लडियाजी ने अपने इन कार्यों के लिए कभी आत्मगौरव नहीं किया, इसके निमित्त अपने सहयोगी नेता-मंत्रियों से कोई अवसर का लाभ नहीं उठाया। स्वतंत्रता की रजत-जयंती के अवसर पर 1972 ई. में मुक्तियोद्धा-पेंशन, ताम्रपत्र लेने के लिए जो आपाधापी मची थी, उस समय अनेक अनुरोधों के बावजूद भगवती प्रसाद लडियाजी ने इन्हें लेने से सविनय अस्वीकार किया था।



तृतीय अध्याय

राष्ट्रभाषा प्रेमी



सूचना : गांधीजी के रचनात्मक कार्यक्रमों से प्रभावित होकर भगवती प्रसाद लडियाजी राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रति आकर्षित होते हैं। हिंदी के माध्यम से भी राष्ट्र की सेवा की जा सकती है, देश की भावात्मक एकता को शक्ति प्रदान की जा सकती है, क्योंकि इसी के भीतर ही भारत की आत्मा बसती है। तत्सम, तद्भव, देशी एवं विदेशी शब्दों से समृद्ध यह भाषा विश्व के अन्यतम जनपूर्ण स्थानों में प्रचलित है, समादृत है; संसार के अन्य जिन स्थानों में भारत के लोग प्रवृजित हुए हैं, वहां भी कमो-वेश उनके बीच हिंदी का प्रचलन है। वस्तुतः गांधीजी के लिए ही भारतवर्ष में हिंदी का एक वातावरण बना, इसे राष्ट्रभाषा की गरिमा प्राप्त हुई; प्रादेशिक स्तर से उठकर यह राष्ट्रीय धारा में समाहित हो गई। गांधीजी ने अपने बेटे देवदास गांधी को हिंदी प्रचार हेतु दक्षिण भारत भेजा, इसी तरह भारत के उत्तर-पूर्वांचल भी उनकी दृष्टि से अछूता नहीं रहा; यहां तक भी हिंदी के प्रचारकों को भेजा। इसके परिणामस्वरूप हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए असम में संस्था बनी, आग्रहीजनों के लिए हिंदी सीखने का अवसर प्राप्त हुआ। हिंदी-भाषी प्रदेशों से हिंदी के शिक्षकगण हिंदी के प्रचार-प्रसार हेतु भारतवर्ष के विभिन्न स्थानों तक गए और इसके लिए अनुकूल वातावरण बनाया गया। असम भी इनमें से एक है। भगवती प्रसाद लडिया का संकल्प तो हिंदी का प्रचार-प्रसार था, परंतु उन्हें हिंदी की कोई योग्यता नहीं थी। फिर भी वे पीछे नहीं हटे, इसे एक चुनौती के रूप में स्वीकार कर उन्होंने हिंदी सीखी, परीक्षा में बैठे और हिंदी की पत्र-पत्रिका पढ़कर स्वाध्याय से अपनी योग्यता बढ़ाई।

असम में हिंदी की पृष्ठभूमि : असमिया और हिंदी साहित्य में प्रारंभिक साहित्य का श्रीगणेश प्रायः एक ही समय में ही हुआ था। हिंदी साहित्य में सिद्ध साहित्य के सरहपाद को प्रथम कवि के रूप में स्वीकारा जाता है। यह कवि असम के गुवाहाटी के निकटवर्ती गांव रानी (राज्ञी) के थे। बताया जाता है कि उनका जन्म

एक ब्राह्मण और एक डाकिनी के संयोग से होता है। वे ब्राह्मण्य एवं बौद्ध दोनों धर्मों में पारंगत थे। प्राच्य के राजा चंदनपाल के समय वे जीवित थे। उस समय असम के सिद्धगण बंगाल, उड़ीसा, उत्तर बिहार आदि भ्रमण करते रहते थे और उनके साथ सिद्ध-साहित्य का भी प्रचलन होता था। असम और बंग में इस सिद्ध-साहित्य को 'चर्यापद' कहा जाता है। सरहपाद जब उड़ीसा से महाराष्ट्र गए तब एक योगिनी व्याध कन्या के रूप में उनके संसर्ग में आई, जिससे उन्हें महामुद्रा की सिद्धि प्राप्त हुई और वे 'सरह' नाम से ख्यातिमान हुए। उनका अन्य एक नाम था- राहुलभद्र। परवर्ती समय में वे नालंदा मठ के पुरोहित बनते हैं। सरहपाद धर्मकीर्ति (600-50) के समकालीन थे। उनकी रचना का नमूना :

मिछे लोअ बंधाब ए अपणा।

अंभे न जाणहुं अचिन्त जोई॥

डॉ. वाणीकांत काकति ने उनकी पुस्तक 'प्राचीन कामरूप की धर्म-धारा' में तिब्बतीय लामा 'सिद्ध चरितावली' के आधार पर उल्लेख किया है मीननाथ या लुङ्पाद और उनके पुत्र मच्छिन्द्रनाथ कामरूप के दो कैवर्त सिद्ध पुरुष थे। मीननाथ भी सिद्ध-कवि थे। उनके गीत का नमूना है :

कहति गुरु परमार्थर बात,

कर्म कुरंग समाधिक पात।

कमल विकसिल कहै न जमरा,

कलम मधु पिबि ढोके न भमरा।

अतः देखा जाता है कि असम में ब्रजयानी सिद्धों ने सातवीं शती में ही हिंदी का प्रारंभिक रूप प्रचार किया था और उनके शिष्यगण इन चर्या-गीतों या सिद्ध-साहित्य का गायन करते थे।

महापुरुष शंकरदेव (1449-1568) ने सन् 1481 ई. से 1493 ई. तक लगातार बारह वर्षों तक भारत-भ्रमण करते समय मैथिल कोकिल विद्यापति की पदावली से प्रभावित होकर 'ब्रजावली' या 'ब्रजबुलि' नामक एक कृत्रिम भाषा में 'बरगीत' और 'अंकिया नाटक' रचना कर असम में हिंदी की नींव स्थापित की थी। परवर्ती समय में महापुरुष माधवदेव (1489-1596) ने भी 'बरगीत' एवं नाटक- झुमुराओ से उसकी श्रीवृद्धि की। दोनों महापुरुषों की रचनाओं के नमूने :

शंकरदेव :मन मेरि राम चरणहि लागु।

तइ देखो ना अंतक आगु॥

माधवदेव : धन्य धन्य कलिकाल

धन्य नरतनु भाल

धन्य धन्य भारत बरिषे।।

श्रीमंत शंकरदेव और श्री माधवदेव की ब्रजावली भाषा के आदर्शों को सत्रहवीं-अठारहवीं शती के वैष्णव कवियों ने भी स्वीकार करने की परंपरा देखी जा सकती है।

जोरहाट में हिंदी की शिक्षा-बत्ती : हादिरा चौकी के दुवरिया (चुंगी वसूलने वाला) परशुराम फुकन के दो पुत्र थे- हलीराम और यज़राम। यज़राम (1805-1837) ने जोरहाट में पुलिस सुपरिंटेंडेंट के पद पर काम करते समय यह अनुभव किया था कि असम के लोगों के लिए बंगला सीखने की अपेक्षा हिंदी सीखना अधिक लाभदायक होगा। इसीलिए हिंदी शिक्षण की दृष्टि से उन्होंने **हिंदी व्याकरण और अभिधान** नामक ग्रंथ-लेखन की योजना बनाई। उन्होंने अपनी पूरी योजना कलकत्ते से प्रकाशित होने वाले **समाचार दर्पण** में 19 मई, 1832 ई. के अंक में प्रकाशित कराई। ग्रंथ की योजना चार खंडों में बनाई गई थी- (क) वाक्यावली, (ख) इतिहास, (ग) व्याकरण और (घ) अभिधान। यह योजना सफल होती इसके पूर्व केवल बत्तीस वर्ष की आयु में वे चल बसे। उनके 'वाक्यावली' और 'अभिधान' के नमूने :

वाक्यावली : अंग्रेजी- Can you speak our language?

Yes, I can speak a little English.

हिंदी : तोम हमारि जबान बोल शकते हो ?

हां, अंग्रेजी कुछ-कुछ बोल शकता हूं।

अभिधान : Sunshine- रौद्र, आतप, धूप।

भुवनचंद्र गगै के हिंदी-प्रशिक्षण का प्रयास : शिवसागर के चेतिया गांव में जन्म लेने वाले भुवनचंद्र गगै ने (1889-1940 ई.) शिवसागर के निकट बकता ग्राम में सन् 1918 ई. में **असम पॉलिटिकल इंस्टीट्यूशन** की स्थापना की थी। स्वदेश प्रेम, स्वदेशी शिक्षा एवं स्वावलंबन ही इनके आदर्श थे। स्वावलंबन की दृष्टि से कृषि, बढ़ई, बुनाई, सिलाई, लुहार, बांस-बेंत का काम इत्यादि के प्रशिक्षण दिए जाते थे। सन् 1926 ई. में इसी विद्यालय में हिंदी को अनिवार्य पाठ्यक्रम बनाया गया। परंतु योग्य पाठ्य-पुस्तक एवं शिक्षकों की कमी महसूस हुई। सन् 1928 ई. में काशी एवं बिहार से शिक्षकों के आ जाने पर हिंदी-शिक्षण में गति आई। सन

1929 ई. में उत्तर प्रदेश के बलिया के सूर्यवंशी मिश्र को बुलाकर नियुक्ति दी गई। इससे शिवसागर में एक ऐसा वातावरण बना कि केवल छात्र-छात्राएं ही नहीं, बल्कि बूढ़े-बुजुर्ग भी हिंदी शिक्षा में शामिल होने लगे। हिंदी की शिक्षा तीसरी से आठवीं कक्षा तक अनिवार्य करने के उपरांत आगे दसवीं तक ऐच्छिक कर दी गई। इस विद्यालय को काशी हिंदू विश्वविद्यालय की स्वीकृति मिली थी। इसके समानान्तर वर्धा हिंदी प्रचार समिति की परीक्षाएं भी चलाई जाती रहीं। पॉलिटिकल में स्थापित परीक्षा केंद्र के प्रथम व्यवस्थापक थे इंद्रेश्वर चुतीया। इसके बाद भुवनचंद्र गगै ने केंद्र व्यवस्थापक का दायित्व संभाला। इसी तरह भुवनचंद्र गगै ने स्वप्रेरणा से असम में हिंदी का वातावरण बनाया।

हिंदी-प्रचार में गांधीजी की भूमिका : सन् 1918 ई. के 29 मार्च से 31 मार्च तक इंदौर में आयोजित हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के आठवें सम्मेलन में दक्षिण अफ्रीका से लौटने वाले मोहनदास करमचंद गांधी को अध्यक्ष बनाया गया। सभापति के भाषण में गांधीजी ने घोषणा की थी कि हिंदी भारतीय जनता की भाषा है। स्वतंत्र भारत में एक राष्ट्रभाषा की आवश्यकता होगी और उसकी पूर्ति हिंदी ही कर सकेगी। गांधीजी ने एक प्रस्ताव रखा कि स्वतंत्रता आंदोलन के साथ-साथ हिंदी प्रचार का आंदोलन भी चलाना चाहिए। कांग्रेस ने भी अपने कार्यक्रम में हिंदी को सूचीबद्ध किया। गांधीजी के आग्रह पर दक्षिण भारत में हिंदी प्रचार हेतु उनके पुत्र देवदास गांधी को सन् 1918 ई. में ही भेजा गया। उस समय भारतीय राजनीति के चाणक्य के नाम से जानने वाला चक्रवर्ती राजागोपालाचारी के घर में रहकर देवदास गांधी ने हिंदी प्रचार का श्रीगणेश किया। प्रथम छात्रा बनी राजागोपालाचारी की कन्या लक्ष्मी देवी, जो परवर्ती समय में देवदास गांधी की पत्नी बनी।

गांधीजी ने जब देखा कि दक्षिण भारत में धीरे-धीरे हिंदी की प्रगति हो रही है, तब उनकी दृष्टि भारत के पश्चिम और पूर्व की ओर गई। इसके लिए आवश्यक था एक विद्वान, कर्मठ और निष्ठावान व्यक्ति का। अतः बापूजी ने काका साहब कालेलकर को इसका दायित्व सौंपा।

असम में हिंदी प्रचार का शुभारंभ : काका साहब कालेलकर ने भारत के पूर्वांचल में हिंदी प्रचार का दायित्व बाबा राघवदास (1896-1958 ई.) को सौंपा। उनका जन्म महाराष्ट्र के पूनानगर में हुआ था और मुख्य कर्मक्षेत्र उत्तर प्रदेश, मुख्यतः गोरखपुर और देवरिया जिला। इस निमित्त उन्होंने कई साथियों के साथ सन् 1934 ई. में हिंदी प्रचार के उद्देश्य से असम की पहली यात्रा की।

बिहार के मुजफ्फरपुर जिले के दिस्तोलिया ग्राम के ध्यानदास शर्मा (1892-1973 ई.) सन् 1935 ई. में हिंदी प्रचार हेतु गोलाघाट आए थे। इसी तरह अम्बिका प्रसाद त्रिपाठी ने जोरहाट में, शिवसिंहासन मिश्र ने डिब्रूगढ़ में हिंदी विद्यालयों की स्थापना की थी। सन् 1938 ई. में उत्तर-प्रदेश के बलिया से वैकुण्ठनाथ सिंह गोलाघाट आए थे।

बाबा राघवदास ने सन् 1937 ई. में दूसरी बार असम यात्रा करते समय उनके साथ काका कालेलकर, दादा धर्माधिकारी, मोटुरी सत्यनारायण और श्रीमन्नारायणजी भी आए थे। उन्होंने हिंदी प्रचार के उद्देश्य से असम के गुवाहाटी, नगांव, जोरहाट, गोलाघाट, शिवसागर, डिब्रूगढ़ आदि स्थानों का दौरा किया। इन गांधीवादी नेताओं के हिंदी प्रचार हेतु असम आने पर असम के लोकप्रिय गोपीनाथ बरदलै की दृष्टि आकर्षिक हुई और उन्होंने भी इस कार्य में उत्साह दिखाया। उस समय बरदलैजी विधानसभा में कांग्रेस नेता थे। इसके परिणामस्वरूप हिंदी के प्रचार में आशातीत सफलता मिली। असम के अन्य नेतागण यथा- देशभक्त तरुणराम फुकन, कर्मवीर नवीन चंद्र बरदलै, देशप्राण कृष्णनाथ शर्मा, देशप्रिय भुवनचंद्र गगै, कर्मयोगी डॉ. हरिकृष्ण दास, राजर्षि पीतांबर देव गोस्वामी, नाथुराम साहु, कर्मप्राण बी.के. भंडारी, देशनेता कुलधर चलिहा, त्यागवीर हेमचंद्र बरुवा, शिक्षाविद् शरत्चंद्र गोस्वामी, हिंदी प्रेमी अमलप्रभा दास, वाग्मीकवि नीलमणि फुकन, अक्लांत देशसेवी अमिय कुमार दास, जननेता विष्णुराम मेधी, इतिहासकार डॉ. सूर्य कुमार भूयां, आलोचक डॉ. वाणीकांत काकति, कवि-साहित्यकार देवकांत बरुवा आदि ने भी हिंदी के प्रचार-प्रसार में प्रोत्साहन देकर असम में हिंदी का एक अनुकूल वातावरण बनाया।

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति : प्रचार एवं परीक्षा की दृष्टि से सन् 1910 ई. के 1 मई को हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग की स्थापना हुई थी। इसके संस्थापक अध्यक्ष बने पंडित मदन मोहन मालवीयजी। अहिंदीभाषी प्रदेशों में व्यवस्थित ढंग से हिंदी के प्रचार हेतु सन् 1936 ई. में वर्धा शहर में हिंदी प्रचार समिति की स्थापना होती है। सन् 1938 ई. के अंतिम भाग में वर्धा समिति ने असम में हिंदी प्रचार को गति प्रदान करने हेतु दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा के अनुभवी कार्यकर्ता श्री यमुना प्रसाद श्रीवास्तव को संचालक बनाकर भेजा था। उनके साथ बाबा राघवदास भी थे और सहयोगी हिंदी प्रेमियों की उपस्थिति में 3 नवंबर, 1938 ई. को गुवाहाटी में **असम हिंदी प्रचार समिति** की स्थापना हुई थी। नवगठित इस समिति के संस्थापक अध्यक्ष लोकप्रिय गोपीनाथ बरदलै को बनाया गया था। लोकप्रिय बरदलैजी की

अध्यक्षता में 11 दिसंबर, 1938 ई. को कॉटन कॉलेज में समिति की प्रथम बैठक हुई। इस बैठक में बाबा राघवदास एवं यमुना प्रसाद श्रीवास्तव के अतिरिक्त रमेशचंद्र, बी.के. भंडारी, नीलमणि फुकन, आर.डी. शाही, जे.एन. उपाध्याय, देवकांत बरुवा एवं तत्कालीन शिक्षा निदेशक मि. जी. स्माल उपस्थित थे। उस समय संयुक्त सरकार में गोपीनाथ बरदलै प्रधानमंत्री होने के कारण इसी बैठक में कर्मयोगी डॉ. हरिकृष्ण दास को समिति के अध्यक्ष और देवकांत बरुवा को मंत्री बनाए गए। बरदलैजी ने इसी बैठक में समिति को वार्षिक बारह सौ रुपए सरकारी अनुदान देने की घोषणा की। साथ ही माध्यमिक विद्यालयों में पांचवीं कक्षा से हिंदी सीखाने का प्रस्ताव पारित किया गया।

समिति की दूसरी बैठक में काका कालेलकर के प्रस्तावानुसार 'असम हिंदी प्रचार समिति' का नाम परिवर्तित कर **असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति** रखा गया। हिंदी-प्रचारकों की बढ़ती हुई मांग की पूर्ति के लिए समिति ने सन् 1938 ई. में ही प्रचारक शिविर आयोजित करने की योजना बनाई गई। इस शिविर के लिए अध्यापक के रूप में बिहार के छपरा से श्री कमलनारायण देव आए, और पववर्ती समय में उन्होंने समिति के संचालक का दायित्व संभाला। उनके संचालन में समिति का तो विकास हुआ ही, हिंदी ने असम में नया साख जमाया।

सन् 1939 ई. में असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के अध्यक्ष डॉ. हरिकृष्ण दास की अध्यक्षता में गोलाघाट में एक सभा हुई, जिसमें वहां एक शाखा और परीक्षा केंद्र स्थापित करने का निर्णय लिया गया।

गोलाघाट में हिंदी प्रचारक लडियाजी : सन् 1939 ई. में गोलाघाट में असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की एक शाखा स्थापित हुई। इसमें अन्यान्य सहयोगियों के साथ भगवती प्रसाद लडियाजी ने भी काफी सहयोग किया। इसके पूर्व राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का परीक्षा केंद्र पूर्वी भारत में केवल मणिपुर के इम्फाल में था। गोलाघाट में दूसरा हिंदी परीक्षा केंद्र बनाया गया था। गोलाघाट में परीक्षा केंद्र स्थापित होने पर भगवती प्रसाद लडियाजी प्रथम वर्ष में ही परीक्षार्थी बने। प्रथम वर्ष के हिंदी परीक्षार्थियों में खर्गेश्वर तामुली, हीरेन बरा, रासेश्वरी खाटनियार, मोलान बरा और भगवती प्रसाद लडिया थे।

हिंदी की परीक्षा में बैठकर लडियाजी काफी उत्साहित हुए और हिंदी साहित्य का ज्ञान प्राप्त करने के लिए उन्होंने राजेंद्रनाथ बरुवा, वैकुण्ठनाथ सिंह, सुरेंद्र नाथ सड़किया, गजानन जालान आदि से मिलकर एक हिंदी पुस्तकालय की स्थापना की

थी। सर्वप्रथम कांग्रेस ऑफिस में ही इसे प्रारंभ किया गया था। इसमें खर्गेश्वर तामुली, हरिश गोस्वामी आदि का भी पर्याप्त सहयोग मिला था।

सन् 1941 ई. में जब हिंदी की गतिविधि जानने के लिए लोकप्रिय गोपीनाथ बरदलै काका कालेलकरजी के साथ गोलाघाट आए तब भगवती प्रसादजी ने काफी उत्साह दिखाया था। लडियाजी उन्हें पुस्तकालय दिखाकर प्रशंसित हुए थे।

सन् 1942 ई. के मार्च महीने में असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के संचालक कमलनारायण देव गोलाघाट आए। प्रगतिवादी विचारधारा के और 'जयंती' पत्रिका के अन्यतम कर्णधार कमलनारायण देव से मिलकर लडियाजी फूला न समाए। जिन व्यक्तियों का प्रभाव लडियाजी के जीवन पर है, उनमें कमलनारायण देव अन्यतम हैं। 'बिहारी कवि' रघुनाथ चौधारी संपादित 'जयंती' पत्रिका बंद हो चुकी थी, परंतु सन् 1943 ई. में पुनः प्रकाशित होने पर प्रगतिवादी विचारधारा के कमलनारायण देव, चक्रेश्वर भट्टाचार्य और भवानंद दत्त इससे जुड़े और इन्होंने पत्रिका को पुनः नया रूप प्रदान किया। भगवती प्रसादजी 'जयंती' के नियमित पाठक बने और अंकों को संग्रह करने लगे। दुर्भाग्यवश: सन् 1946 ई. में टाईफाइड से पीड़ित होकर कमलनारायण की मौत हो गई। ऐसे एक प्रतिभाशाली व्यक्ति के वियोग से लडियाजी काफी व्यथित हुए थे। जब लडियाजी किसी काम के लिए गुवाहाटी आते थे तब निश्चित रूप से कमलनारायण देव से मिलते। दोनों में काफी घनिष्ठ मित्रता थी।

गोलाघाट में हिंदी का त्रिवेणी संगम : असम में संस्थागत रूप में हिंदी प्रचार का प्रारंभ होते समय गोलाघाट में हिंदी का त्रिवेणी संगम हुआ था- भगवती प्रसाद लडिया, ध्यानदास शर्मा और वैकुण्ठनाथ सिंह के समन्वित रूप में। तीनों स्वतंत्रता सेनानी होने के बावजूद हिंदी के प्रचार-प्रसार से अलग नहीं हुए।

भगवती प्रसाद लडियाजी गोलाघाट के थे, परंतु ध्यानदास शर्मा बिहार से और वैकुण्ठनाथ सिंह उत्तर प्रदेश से आए थे। ध्यानदास शर्मा जो एक बार गोलाघाट आए, गोलाघाट के ही होकर रह गए और परलोकगमन भी गोलाघाट में ही हुआ। परंतु वैकुण्ठनाथ सिंह सन् 1938 ई. से प्रायः दस वर्षों तक गोलाघाट में हिंदी के प्रचारक रहे। इन तीनों के समन्वय एवं कर्मोद्यम से गोलाघाट में हिंदी चमकने लगी थी।

पंडित ध्यानदास शर्मा ने (1892-1973 ई.) एक झोपड़ी में कुछ हिंदी भाषी बच्चों को लेकर एक पाठशाला खोली। इसके बाद यह मीडिल और आगे हाई स्कूल तक प्रोन्नत हुआ। यह उच्च माध्यमिक विद्यालय ही है- गोलाघाट टाउन हिंदी हाई स्कूल। इस विद्यालय का इतिहास और पंडित जी के बारे में सुरेंद्रनाथ सड़किया का

उद्गार इस प्रकार है-

स्व. पंडित ध्यानदासजी के साथ प्रायः चालीस वर्षों से मेरा परिचय है। वर्तमान के 'हिंदी हाईस्कूल' की स्थापना उन्हीं के हाथों से हुई है। बाबू स्व. ठाकुरदासजी से वर्तमान के हाई स्कूल की जमीन और एक छोटे से घर का दान उन्हीं के माध्यम से हुआ था। स्व. ठाकुरदासजी के मृत्यु-समय में मैं भी ध्यानदासजी के साथ उपस्थित था। हिंदी विद्यालय के शैशव से लेकर आज के हिंदी विद्यालय के सूत्रधार पंडितजी ही थे। पाठशाला की प्रारंभिक अवस्था में पंडितजी एकमात्र शिक्षक थे और मैं सचिव था। इस विद्यालय के लिए पौरसभा से मिलने वाले मासिक अनुदान के संबंध में या अन्य कोई विषय पर वे मुझसे चर्चा करते थे।

उनका सिद्धांत था- 'नदी ही तश्तरी-कटोरा है, बालू ही घर है'- जहां रात वहीं डेरा डालना है। इस सिद्धांत वाले व्यक्ति थे। अपना कुछ भी न था। देश के लिए उन्होंने त्याग को ही अपने जीवन का मूलमंत्र बनाया। यूँ कहा जाए तो वे चिर-ब्रह्मचारी, आजीवन कांग्रेसी, शिक्षाविद, सहज-सरल निस्वार्थ, अनाडम्बर, अथक मेहनती, देशसेवक थे। सिर पर गांधी टोपी, शरीर पर खादी कुर्ता-धोती, पैर पर 'फानति' जूते; मृत्यु तक उनका एक ही रूप, एक ही चेहरा, एक ही विचारधारा देखने को मिला।

(स्मृति-अर्घ्य, 1973, पृ. 10)

पंडित ध्यानदास शर्माजी के संदर्भ में भगवती प्रसाद लडियाजी का स्मरण महत्वपूर्ण है, क्योंकि कैसे उन्होंने हिंदी स्कूल की स्थापना की और राष्ट्रभाषा के प्रचार-प्रसार में सहयोग किया उसके बारे में उल्लेख है :

पंडित ध्यानदास शर्माजी ने सन् 1935 में गोलाघाट आकर श्रीशंकर चंद्र बरुवा, श्री राजेन्द्रनाथ बरुवा, बाबू बांके सिंह आदि के सहयोग से टुकानी के पास हिंदी पाठशाला की स्थापना की। 1938 ई. में इस पाठशाला को मीडिल का रूप दिया गया। और इसके लिए यहां के प्रमुख सिंधी व्यवसाई ठाकुरदासजी ने करीब दो बीघे जमीन प्रदान की। असम में कांग्रेस सरकार का सम्मिलित मंत्री मंडल गोपीनाथ बरदलै के नेतृत्व में गठित हुआ। बरदलैजी के

गोलाघाट आगमन पर हिंदी स्कूल स्वीकृति कराने हेतु (उस समय बरदलैजी शिक्षा मंत्री भी थे) पंडितजी ने स्कूल विभाग के इंस्पेक्टर श्री शरत चन्द्र गोस्वामी के साथ स्कूल का निरीक्षण करवाया और स्कूल की स्वीकृति कराने में सफल रहे।

राष्ट्रभाषा के प्रचार को आगे बढ़ाने के लिए स्थान-स्थान पर परीक्षा एवं अध्ययन केन्द्रों की पंडितजी ने स्थापना करवाई। आप राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के लगातार सात वर्षों तक संगठन मंत्री रहे और अंत तक समिति के स्तंभ के रूप में रहे हैं। पंडितजी को हिंदी स्कूल की उन्नति के लिए दिन-रात चिंता रहती थी। चार वर्ष पहले (सन् 1969 ई.) स्कूल के सामने वाली जमीन, जो पोखर था, स्कूल के लिए 5000 रुपए में खरीदी। इसका पूरा मूल्य शिलांग के प्रमुख व्यवसाई स्व. ठाकुरदास के पुत्र श्री खूबचंदजी ने दिया। उस गड्डे की जमीन को मिट्टी से भरने में करीब दस हजार रुपए खर्च हुए थे। इस खर्च की अधिकांश रकम पंडितजी ने खूबचंदजी से ही प्राप्त की थी। जीवन के अंतिम समय तक उनको स्कूल की चिंता रहती थी।

(स्मृति-अर्घ्य, पं. ध्यानदास शर्मा, पृ. 4-6)

बैकुंठनाथ सिंह को वर्धा राष्ट्रभाषा प्रचार समिति ने हिंदी प्रचारक के रूप में भेजा था। वे गोलाघाट में रहकर इसके आसपास में परीक्षा केंद्रों की स्थापना करके परीक्षाओं का संचालन करते थे। सन् 1938 ई. में गोलाघाट पहुंचकर सिंहजी ने स्थानीय बेजबरवा हाईस्कूल में परीक्षा केंद्र का संचालन किया था। इनके उत्साह से ही भगवती प्रसाद लडिया, हीरेन बरा आदि परीक्षार्थी परीक्षा में बैठे। वे प्रायः दस वर्षों तक गोलाघाट में रहकर हिंदी के प्रचार-प्रसार में योगदान देते रहे। सिंहजी, भगवती प्रसाद और पंडित ध्यानदासजी के दाएं हाथ की तरह थे।

राष्ट्रभाषा समिति का विभाजन : असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की स्थापना के समय से भगवती प्रसाद लडियाजी इससे जुड़े रहे। सन् 1939 ई. में गोलाघाट में भी इसकी शाखा की स्थापना हुई थी।

असम राष्ट्रभाषा समिति के प्रथम संचालक थे यमुना प्रसाद श्रीवास्तव। सन् 1940 ई. से 1946 ई. अर्थात् मृत्यु के समय तक संचालक थे कमलनारायण देव। स्वतंत्रता के बाद गुवाहाटी के हिंदी साहित्यकार एवं 'पूर्वज्योति' के संपादक छगनलाल जैनजी को संचालक नियुक्त किया गया। छगनलाल जैनजी के बाद वाग्मीकवि

नीलमणि फुकन ने यह दायित्वभार संभाला। समिति के अध्यक्ष असम के मुख्यमंत्री विष्णुराम मेधीजी थे। सन् 1952 ई. में विष्णुराम मेधी की अध्यक्षता में होने वाली सभा में वर्धा शाखा को असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के साथ विलय किया गया। इस उद्देश्य से मिसामारी में वर्धा और असम समिति की संयुक्त बैठक हुई। इस बैठक में सभी वर्गों के सदस्य न रहने के कारण और गांधीजी की 'हिंदुस्तानी' में देवनागरी और उर्दू लिपि को एकत्र स्वीकार करने के विषय में कुछ हिंदी प्रचारक, समाजसेवी, शिक्षाविदों ने वर्धा शाखा को पुनर्जीवित करने का निर्णय लिया। इस दल में रहने वाले प्रमुख व्यक्तियों में नरेंद्र नाथ शर्मा (विधायक), लावण्य प्रभा दत्त चौधुरी, जितेंद्र चंद्र चौधुरी, भगवती प्रसाद लडिया आदि थे। इन लोगों के मुख्य विरोध का कारण था कि हिंदी को दो लिपियों अर्थात् देवनागरी और उर्दू में लिखना उचित नहीं है। ये लोग देवनागरी लिपि के पक्ष में थे। इसके परिणामस्वरूप एक गुट असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति से अलग होकर **असम राज्य राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा** के नाम से संगठित हुआ।

सन् 1953 ई. के सितंबर महीने में वर्धा राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का केंद्रीय कार्यालय शिलांग में स्थापित हुआ। नवगठित समिति के अध्यक्ष रोहिणी कुमार चौधुरी और संचालक एंडमंड कॉलेज के अध्यापक जितेंद्र चंद्र चौधुरी बने। वर्धा समिति के अंतर्गत नई प्रादेशिक समिति को अधिक शक्तिशाली एवं संगठित करने के उद्देश्य से जितेंद्र चंद्र चौधुरी ने पूरे असम का दौरा किया। गोलाघाट में बनाई गई समिति के सदस्य थे- राजकुमार कोहली, अयोध्या प्रसाद गोस्वामी, मदनलाल खेतान, ब्रजभूषण द्विवेदी और भगवती प्रसाद लडिया। प्रथम वर्ष में ही इस समिति की एक आम सभा आयोजित हुई। इसकी अध्यक्षता दौलेश्वर दत्त ने की थी। इस सभा में शिलांग के केंद्रीय कार्यालय के लिए कुछ राशि इकट्ठा करके भेजने का प्रस्ताव पारित किया गया। तदनुसार 1500 (पंद्रह सौ) रुपए संग्रह कर शिलांग केंद्र तक भेजा गया। गोलाघाट में इस समिति के हर कार्य को भगवती प्रसाद लडियाजी संभालते थे।

असम राज्य राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा का नया संविधान प्रस्तुत होने पर सन् 1958 ई. में गोलाघाट के नरेंद्र नाथ शर्मा एम.एल.ए. को अध्यक्ष, तिनसुकिया के एम.एल.ए. राधाकृष्ण खेमका को उपाध्यक्ष एवं भगवती प्रसाद लडिया को प्रचार-सचिव बनाये गये।

तिनसुकिया में राष्ट्रभाषा का अधिवेशन : सन् 1959 ई. में दिल्ली में आयोजित राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलन के अधिवेशन की अध्यक्षता लोकसभा के

अध्यक्ष श्री अनंतशयनम आयंगरजी ने की थी। इसमें असम और उत्तर-पूर्वांचल के काफी प्रचारक सम्मिलित हुए थे। असम के जितेंद्र चंद्र चौधुरी, नरेंद्र नाथ शर्मा, राधाकृष्ण खेमका, भगवती प्रसाद लडिया आदि ने भी भाग लिया था। वहीं पर असम के प्रतिनिधियों ने राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा का दसवां अधिवेशन असम में आह्वान किया, जिसे सादरपूर्वक स्वीकार कर लिया गया।

अखिल भारतीय राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलन का दसवां अधिवेशन 19, 20 और 21 मई, 1961 ई. को असम के तिनसुकिया शहर में आयोजित हुआ। स्वागत समिति के अध्यक्ष- असम के माननीय मुख्यमंत्री बिमला प्रसाद चलिहाजी और स्वागत मंत्री- तिनसुकिया के समाजसेवी राधाकृष्ण खेमकाजी थे। वर्षा का मौसम होने पर भी लगभग पांच सौ की संख्या में प्रतिनिधि पहुंचे थे। गोलाघाट के भगवती प्रसाद लडियाजी भी स्वागत समिति के प्रचार-प्रसार मंत्री थे और उन्होंने अधिवेशन को सफल बनाने के लिए हर संभव प्रयास किया था।

तारीख 19 मई, 1961 को प्रातः 8.30 बजे झंडा-वंदन का कार्यक्रम संपन्न हुआ। झंडोत्तोलन उत्तर-प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री डॉ. संपूर्णानंदजी ने किया। अपने भाषण में उन्होंने कहा- 'झंडा तो एक कपड़े का टुकड़ा होता है। बांस और लकड़ी के सहारे वह कुछ देर के लिए खड़ा कर दिया जाता है। झंडे का महत्व बांस और कपड़े के नहीं बल्कि उन आदर्शों और भावनाओं से होता है, जिनसे देश के चरित्र का निर्माण होता है और उसके विकास के लिए पथ बनता है।' सुबह 10.30 बजे से हिंदी साहित्य सम्मेलन की विषय निर्वाचिनी समिति की बैठक हुई और अपराह्न 3.30 बजे खुला अधिवेशन श्री उपेंद्रनाथ अशकजी की अध्यक्षता में हुआ। इसके बाद प्रदर्शनी का उद्घाटन डॉ. संपूर्णानंदजी ने किया। प्रदर्शनी का आयोजन बड़े पैमाने पर किया गया था। इसमें रेलवे विभाग, केंद्रीय सरकार का प्रचार विभाग, नियोजन विभाग आदि संस्थाओं ने भाग लेकर इसे आकर्षित बनाया। एक बड़े स्टॉल में वर्धा समिति द्वारा बनाए गए चार्टर्स और मानचित्र आदि रखे गए थे। समिति की रजत जयंती संबंधी तथा समिति की जानकारी देने की व्यवस्था करने पर उद्घाटक एवं दर्शक काफी प्रभावित हुए। रात को 8 बजे कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया, जिसमें श्री गोपालसिंह नेपाली, श्री बेधड़क बनारसी, कुमारी मधु, सुमित्रा कुमार सिन्हा, रमा सिन्हा, रामेश्वर दयाल दुबे आदि कवि-कवयित्रियों ने भाग लिया था।

तारीख 20 मई, 1961 को सुबह 9 बजे डॉ. संपूर्णानंदजी ने परिचय गोष्ठी में प्रतिनिधियों के साथ चर्चा कर अपना भाषण दिया। उसी दिन सम्मेलन के

उद्घाटक माननीय रेल मंत्री श्री जगजीवन राम और उत्कल के नेता डॉ. हरेकृष्ण महताब दोनों करीब 1.30 बजे मोहनबाड़ी हवाई अड्डे पर उतरे। ठीक 3 बजे दोनों नेता सम्मेलन के प्रवेशद्वार पर पहुंचे जहां उनका भव्य स्वागत किया गया था। प्रतिनिधि, दर्शक एवं निमंत्रित अतिथियों को लेकर करीब 15 हजार से अधिक लोग पंडाल में उपस्थित थे। वर्षा के दिन होने से पंडाल टीनों से बनाया गया था।

'एक हृदय हो भारत जननी' गीत के साथ सम्मेलन की कार्यवाही प्रारंभ हुई। यह गीत श्रीमती यमुनाताई शेबड़े ने गाया था। गीत के बाद स्वागताध्यक्ष श्री बिमला प्रसाद चलिहाजी का भाषण तिनसुकिया म्युनिसिपलिटी के चेयरमैन श्री यदुनाथ भुयांजी ने पढ़कर सुनाया, क्योंकि उसी दिन प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू के असम दौरे के कारण श्री चलिहाजी उपस्थित नहीं हो सके। स्वागत मंत्री श्री राधाकृष्ण खेमकाजी ने अपना स्वागत भाषण दिया और समिति के मंत्री श्री मोहन लाल भट्ट ने अपना वक्तव्य पढ़ कर सुनाया।

अधिवेशन के उद्घाटक माननीय रेलमंत्री श्री जगजीवन राम ने अपने मननपूर्ण भाषण में हमारी राष्ट्रीय एकता, हिंदी का स्वरूप, गांवों में स्थानीय भाषा का महत्व, सरकार का दायित्व आदि के संबंध में अपना विचार रखा। राष्ट्रीय एकता के संबंध में उन्होंने कहा :

राष्ट्रीय एकता के तत्वों में एक राष्ट्रभाषा की कल्पना युगों में परिव्याप्त रही है। दिन थे जब भारत के जन-मानस को स्पर्दित करने वाला अविचल सूत्रों में आबद्ध एक महान राष्ट्र का प्रेरणादायक स्फूर्तिप्रद स्वप्न राजनीति के माध्यम से यदा-कदा लेकिन धर्म के माध्यम से सदैव व्यक्त होता रहता था। हिंदी उस कल्पना का एक अविच्छिन्न अंग है। राम और कृष्ण, शंकर और रामानुजाचार्य, वल्लभाचार्य और माधवाचार्य, संस्कृत और पाली, प्राकृत और अवधी, मगधी और ब्रजभाषा, हिंदी में जैसे सबका समन्वय है- जैसे भारत की समन्वयात्मक प्रतिभा है। यह एक ऐतिहासिक सत्य है कि चौदहवीं, पंद्रहवीं शताब्दियों में जब हिंदी व्यवस्थित रूप धारण करने लगी तो उसकी नींव रखने वालों में दक्षिण भारत के संत और भक्त थे। रामानुजाचार्य के शिष्य रामानंद ने इधर काशी से राम-भक्ति की धारा बहाई तो उधर मथुरा से दक्षिणी संत वल्लभाचार्य ने कृष्ण-भक्ति की निर्मल सरिता प्रवाहित की। इस प्रकार हिंदी की उत्पत्ति और उसके विकास में देश के विभिन्न

भागों का, जनमानस में एक नई चेतना, एक नई उमंग भरने वाली भावनाओं का, हृदय के अंतरतम में निहित ऐक्य की निष्ठा का एक अपूर्व समन्वय रहा है। ऐसी स्थिति में यदि कहीं भी, किसी कारण से भी, हिंदी का खुला या छिपा विरोध हो रहा है, तो मानना पड़ेगा कि विरोध तर्कसंगत आधारों पर नहीं है। जो भाषा हमारी परंपराओं, हमारी संस्कृतियों, हमारे समन्वयात्मक ज्ञान का वाहक हो, उसके समर्थक यदि राष्ट्र की एकता के बैरी माने जाने लगे, तो यह विधि की बिडम्बना मानी जाएगी।

सम्मेलन के अध्यक्ष **श्री हरेकृष्ण मेहताबजी** ने बड़े लंबे विचारपूर्ण भाषण में हिंदी के प्रचलन एवं महत्व पर सभी का ध्यान खींचते हुए कहा- 'राष्ट्रभाषा, राष्ट्र की आत्मा है; यह बात राष्ट्रपिता गांधीजी ने हमको आज से पहले ही बतलाई थी। उनका कथन अंतर की अनुभूति की अभिव्यक्ति है। उन्होंने इस बात को एक बार नहीं, अनेक बार कहा था कि मुझको अंतरात्मा से प्रेरणा मिलती है, मैं उसको भगवान का हुक्म मानकर काम किया करता हूँ। किसी काम को मैं यून ही आरंभ नहीं करता। इसलिए राष्ट्रभाषा के संबंध में जो कार्य, जो श्रम और जो उपाय आपने बतलाए हैं, वे भी उनकी अंतरात्मा की पुकार थी। अतएव हम यह भी कह सकते हैं- वह भगवान का एक प्रकार का निर्देश भी है।' हिंदी की प्रयोजनीयता पर उन्होंने प्रकाश डालते हुए अंत में कहा :

परिशेष में मैं एक-दो शब्द हिंदी के साहित्यिकों से कहूंगा। यह तो मान लेना होगा कि हिंदी उनकी मातृभाषा नहीं है, बल्कि सारे भारत राष्ट्र की राष्ट्रभाषा है। इसलिए जिस प्रकार की इच्छा-आग्रह हम करते हैं, वे भी करें। हिंदीतरांतों में जाएं, उन्हें अपनी साहित्यिक विचारधारा में अवगाहन करने का मौका दें और साथ में प्रांतीय भाषा-साहित्य की धारा में गोता लगा आनंद लाभ करें। इस प्रकार के आदान-प्रदान में केवल हिंदी का माध्यम काम करेगा। लोग एक-दूसरे से मिलेंगे। परिचय प्राप्त करेंगे। कुछ देकर जाएंगे और प्रांत भी कुछ देने में कंजूसी नहीं करेंगे। इस मौलिक आदान-प्रदान से राष्ट्रभाषा- साहित्य भंडार में बहुत से प्रांतीय भाषा-साहित्य के शब्द सुंदर प्रतिनिधित्व करने में समर्थ हो सकेंगे। यह कार्य केवल विद्वानों के शब्द-दान से कदापि नहीं होगा। क्रियाकलापों से अपने-

अपने आप घुसते चले जाएंगे। केवल राष्ट्रभाषा साहित्य का द्वारा पूर्ण उन्मुक्त रखने की जरूरत है।

अध्यक्षीय भाषण के पहले असम प्रांतीय समिति के संचालक श्री जितेंद्र चंद्र चौधुरी ने सम्मेलन के अवसर पर आए हुए संदेश पढ़कर सुनाए।

इसी अधिवेशन में मराठी-हिंदी लेखक **श्री अनंत गोपाल शेवडेजी** को महात्मा गांधी पुरस्कार समर्पित किया गया। श्री गंगाधर इंदूरकर ने शेवडेजी का परिचय दिया, परीक्षा-मंत्री श्री रामेश्वरदयाल दुबे ने महात्मा गांधी पुरस्कार संबंधी जानकारी दी। तत्पश्चात् डॉ. हरेकृष्ण मेहताबजी ने श्री शेवडेजी को 1500 रुपए की थैली तथा ताम्रपत्र प्रदान किया। पुरस्कार को स्वीकार कर शेवडेजी ने आभार प्रकट करते हुए कहा- 'कामाख्या देवी की पुण्यभूमि असम जहां प्रकृति सदा लहलहाती है, ऐसे सुंदर प्रदेश में आपने जो मेरा सम्मान किया, उसके लिए मेरा हृदय कृतज्ञता से भर गया है। जिस भाग्यविधाता और युगपुरुष के नाम पर यह पुरस्कार दिया जा रहा है और जिन्हें यह पुरस्कार आज तक दिया गया है, उनके समक्ष मैं अपने को नगण्य समझता हूँ, मैंने 30-35 वर्षों पहले राष्ट्रभाषा हिंदी में लिखना प्रारंभ किया। मुझसे यह मंगल आशा रखी गई है कि भविष्य में मैं और भी अधिक राष्ट्रभाषा की सेवा में तत्पर रहूँ। मैं यह सद्भावना आप से लेकर जाता हूँ ताकि भविष्य में सफल बनने में आपका आशीर्वाद सफल हो सके।'

(स्मरण रहे कि इन्हीं श्री अनंत गोपाल शेवडे के महामंत्रीत्व में 10-13 जनवरी, 1975 ई. में महाराष्ट्र के नागपुर में प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन का आयोजन हुआ था।)

रात को असम के कलाकारों ने सांस्कृतिक कार्यक्रमों को प्रस्तुत किया।

21 मई, 1961 ई. को सुबह 11 बजे विषय निर्वाचनी समिति की बैठक हुई जिसमें खुले अधिवेशन में रखने के लिए कुछ प्रस्ताव पारित किए गए।

शाम को 3 बजे आयोजित खुले अधिवेशन में रत्न उत्तीर्ण विद्यार्थियों को डॉ. हरेकृष्ण मेहताबजी ने उपाधि प्रदान की तथा दीक्षांत भाषण दिया। अपने भाषण में मेहताबजी ने विद्यार्थियों को राष्ट्रभाषा प्रचार कार्य में दत्तचित रहने का आह्वान किया और साथ ही कहा कि जिन स्नातकों को आज उपाधि मिल रही है, अथवा पहले मिली है, उनसे हिन्दी की काफी आशाएं हैं, हिंदी उनकी ओर आशापूर्ण नेत्रों से देख रही है, आशा है वे राष्ट्रभाषा के प्रति अपना कर्तव्य समझेंगे और भविष्य में उसकी भी वृद्धि में योगदान देंगे।

इस अधिवेशन में असम सरकार के प्रतिनिधि के रूप में श्री कामाख्या प्रसाद त्रिपाठी, श्रम एवं उद्योग मंत्री उपस्थित थे। अंत में स्वागत मंत्री श्री राधाकृष्ण खेमकाजी ने आभार प्रदर्शन किया और राष्ट्रगीत होने के पश्चात् अधिवेशन की कार्यवाही समाप्त हुई।

यह अधिवेशन असम राज्य राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के लिए एक अविस्मरणीय कीर्ति रही।

सन् 1970 ई. में नरेंद्रनाथ शर्मा के देहावसान होने पर तिनसुकिया के श्री राधाकृष्ण खेमकाजी को अध्यक्ष बनाया गया और 28 दिसंबर, 1977 ई. अर्थात् मृत्यु तक वे इसी पद पर बने रहे।

लडियाजी राष्ट्रभाषा के संचालक बने : असम प्रदेश कई हिस्सों में बंटने पर छोटे-छोटे अन्य राज्य बने। फलतः असम राज्य राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के कुछ नियमों का संशोधन करना पड़ा। मेघालय राज्य गठन होने पर इसका केंद्रीय कार्यालय शिलांग से जोरहाट तक स्थानांतरित हुआ। वर्धा केंद्रीय समिति के संचालक मधुकर राव चौधरी ने संगठन में दक्षता रखने वाले भगवती प्रसाद प्रसाद लडियाजी पर असम राज्य के संचालक का दायित्व सौंपा। श्री भगवती प्रसाद लडियाजी ने सन् 1976 ई. से 1980 ई. तक इस दायित्वपूर्ण पद पर कार्यनिर्वह किया। 1976 सन से 1980 सन तक असम सरकार में 'हिंदी सलाहकार समिति' के सदस्य थे। तिनसुकिया के राधाकृष्ण खेमकाजी के निधन होने पर जोरहाट के राजेंद्र नाथ बरुवाजी को अध्यक्ष बनाया गया। इस संस्था के अंतर्गत 1978 ई तक 60 परीक्षा केंद्र, 21 प्रशिक्षण केंद्र और 3 विद्यालय कार्यरत थे।

शिवसागर जिला प्रचारक सम्मेलन : गोलाघाट एमेचर नाट्य मंदिर में 21 सितंबर, 1969 ई. को बकुलवन के कवि आनंद चंद्र बरुवाजी की अध्यक्षता में शिवसागर जिला राष्ट्रभाषा प्रचारकों का सम्मेलन अनुष्ठित हुआ। स्वागताध्यक्ष राजेंद्र नाथ बरुवाजी ने प्रचारकों का स्वागत करते हुए गोलाघाट अंचल में दीखने वाली हिंदी प्रचार की समस्याओं पर प्रकाश डाला। राज्य समिति के संचालक जितेंद्र चंद्र चौधरी और हिंदी-असमीया साहित्यकार बापचंद्र महंत ने राष्ट्रभाषा के प्रचार-प्रसार में अधिक ध्यान देने का आग्रह व्यक्त किया, अध्यक्षीय भाषण में आनंद चंद्र बरुवा ने हिंदी सीखने के प्रति आग्रहान्वित होने पर महत्व दिया। इसी सम्मेलन में विशिष्ट हिंदी शिक्षा सेवी, गोलाघाट में हिंदी का दीपक जलाने वाले पंडित ध्यानदास शर्माजी को 501 रुपए की थैली भेंटकर सम्मानित किया गया। इस सम्मेलन को

सफल बनाने में शिवनाथ शर्मा, हरिनारायण सिंह, गुणीन सड़किया, मनभरण ठाकुर, गिरीन बरा आदि का सराहनीय योगदान रहा। अंत में स्वागत मंत्री श्री भगवती प्रसाद लडियाजी ने सभी के प्रति आभार निवेदन किया।

हिंदी विद्यार्थी के प्रेरणादाता : भगवती प्रसाद लडियाजी ने अनेक विद्यार्थियों को प्रेरित कर हिंदी जगत में लाया था। हिंदी सीखने पर अनेकों के जीवन में काफी परिवर्तन आया और कुछ लोगों को ज्ञान मिला। वैसे विद्यार्थियों की संख्या अनगिनत होने पर भी अध्यापक-शिक्षाविद्, जानेमाने लेखक, असम साहित्य सभा के पूर्व अध्यक्ष डॉ. नगेन सड़किया ने यह स्मरण किया है कि कैसे वे लडियाजी से प्रेरित हुए थे। उनका उद्गार इस प्रकार का है :

मैं विद्यार्थीकाल से अभिभावक स्वरूप श्रीमान् भगवती प्रसाद लडियाजी से मिलता आया हूँ। डेकियाल स्कूल में सातवीं कक्षा में दाखिला लेने के बाद वे वर्धा हिंदी प्रचार समिति के गोलाघाट महकमा का (तब जिला होने की कोई बात ही नहीं थी) मुख्य प्रचारक थे। उनकी प्रेरणा से हिंदी सीखने का प्रयास किया और 'प्रवेशिका' परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ। 'परिचय' परीक्षा में भी उत्तीर्ण हुआ। 'कोविद' की परीक्षा नहीं दे सका।

देवनागरी लिपि के हिमायती थे लडियाजी : हिंदी के लिए देवनागरी और उर्दू लिपि के संदर्भ में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति विभाजित होने पर एक वर्ग ने वर्धा समिति के अंतर्गत शिलांग में कार्यालय स्थापन किया था। वस्तुतः गांधीजी हिंदी को सर्वत्र स्वीकार्य कराने के लिए देवनागरी और उर्दू दोनों लिपियों के एकत्रिकरण से 'हिंदुस्तानी' करने के पक्षधर थे, परंतु राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन जैसे हिंदी के पक्षधर वालों ने हिंदी के लिए उर्दू लिपि को सीधे खारिज किया था। अंत में हिंदी के लिए केवल देवनागरी लिपि ही स्वीकृत हुई, जो प्राचीन संस्कृत भाषा की लिपि थी, भगवती प्रसाद लडियाजी यद्यपि गांधीवादी थे, वे हिंदी लिपि के संदर्भ में टंडनजी के समर्थक थे, ऐसा कि लडियाजी असमीया लिखते समय भी देवनागरी लिपि का ही व्यवहार करते थे। इस संदर्भ में लडियाजी ने **डॉ. वाणीकांत काकतिजी** के असमिया या भारतीय भाषाओं के लिए एक लिपि- देवनागरी लिपि के प्रयोग के सिद्धांत को हृदय से स्वीकार कर आजीवन इसी का पालन किया। **डॉ. वाणीकांत काकति** ने असमिया भाषा के लिए देवनागरी स्वीकार करने के तर्क को इस प्रकार प्रस्तुत किया :

कुछ दिनों से असमीया वर्णमाला त्याग कर देवनागरी लिपि लेने के पक्ष में विचार आया है, असमीया वर्णमाला बाहर में बांग्ला नाम से परिचित है। हिंदी जब राष्ट्रभाषा बनी तब असम में लोगों को भी देवनागरी लिपि सीखनी पड़ेगी। परंतु असम में जनजातियों के लोग अधिक हैं; इन्हें अपनी रोमन लिपि के अतिरिक्त देवनागरी सीखनी होगी। अतः उन्हें श्रमपूर्वक क ख ग न सीखकर असमीया बोलचाल बिना श्रम से असमीया सीखने में सहजता होगी और यह लिपि असमीया लोगों के श्रम को भी लाघव करेगी। अर्थात् इसके माध्यम से असमीया, हिंदी और संस्कृत भाषा इन तीनों का काम चलाया जा सकेगा। देवनागरी भारतीय संस्कृति के भंडार, संस्कृत साहित्य के भंडार खोल देने के साथ असमीया को वृहत्तर भारत से जोड़ने पर भी मददगार साबित होगी। इन बातों पर गहराई से विचार करने पर असमीया लिपि त्याग कर देवनागरी लिपि स्वीकार करना कोई असंगत प्रतीत नहीं होता।

(नतुन असमीया साहित्य' शीर्षक निबंध)

निष्कर्ष : गांधीजी के रचनात्मक कार्यक्रमों के अंतर्गत हिंदी के प्रचार-प्रसार को हृदय से स्वीकार कर जीवन खपाने वाले भगवती प्रसाद लडियाजी को सन् 1983 ई. में दिल्ली में आयोजित तृतीय विश्व हिंदी सम्मेलन में अवगाहन करने का अवसर मिला था। विश्व के अनेक स्थानों से और भारत के हिंदी प्रेमियों के महामिलन के इस महायज्ञ में अपने को पाकर लडियाजी कृत्य-कृत्य हो गए थे। सन् 1987 ई. में राष्ट्रभाषा समिति, वर्धा ने अखिल भारतीय राष्ट्रभाषा प्रचारकों के सम्मेलन में गुवाहाटी-शुकेश्वर के मणिकुल आश्रम निवासी **विपिन चंद्र गोस्वामीजी** एवं गोलाघाट के हिंदी प्रचारक **भगवती प्रसाद लडियाजी** को आजीवन हिंदी सेवा निमित्त सम्मानित किया था। तत्कालीन असम के मान्यवर प्रधानमंत्री (उस समय यही कहा गया था) लोकप्रिय गोपीनाथ बरदलैजी द्वारा स्वतंत्रता के बाद असम के हर विद्यालय में पांचवीं कक्षा से दसवीं कक्षा तक हिंदी शिक्षा अनिवार्य करने के कारण हिंदी शिक्षकों के शताधिक पदों में कर्मरत होकर जीविकोपार्जन करने वाले शताधिक हिंदी शिक्षकगण लडियाजी जैसे हिंदी प्रचारकों एवं हिंदी सीखने के लिए उन्हें उत्साहित करने वालों के प्रति कितने आभारी होंगे, कौन जानता है। इसी में लडियाजी जैसे निस्वार्थ हिंदी सेवकों की जीवन की सार्थकता छिपी हुई है।



पुस्तक व्यवसाय

सूचना : अपने बचपन में ही पितृ वियोग के कारण पढ़ाई अधूरा छोड़ने की अंतर्वेदना एवं ज्ञान प्राप्ति की अकुलाहट ने भगवती प्रसाद लडियाजी के जीवन की दिशा परिवर्तित कर दी थी, व्यवसायिक जीवन की गतिधारा भी परिवर्तित हुई। 'दादी के गोले' के नाम से गोलाघाट में फैंसी कपड़े की दुकान थी। गोलाघाट में नए सिरे से बनने वाले व्यवसायिक प्रतिष्ठानों- 'दास एंड कंपनी', 'मसलिम' आदि से प्रतिद्वंद्विता बढ़ने पर भी दादी के गोले में कपड़े का चमकदार व्यवसाय चल रहा था। इससे उन्हें काफी उपार्जन भी हुआ। लडियाजी ने जब एक स्थायी मकान बनवाया तब वे एक अपूर्ण सपने को साकार करने के लिए आगे बढ़े। अब तक देश आजाद हो चुका था, स्वतंत्रता संग्राम में व्यतीत करने वाले समय की बचत होने लगी। अतः उनके सामने दो पथ खुले थे- समाज सेवा एवं ज्ञानोपार्जन। इन दोनों को उन्होंने समानांतर रूप से आगे बढ़ाने का निश्चय किया और अनेक चिंतन-मनन के बाद अपने व्यवसायिक धारा को परिवर्तित करने का विचार किया। धन के प्रति उनका स्वाभाविक आकर्षण तो था, पर धन-सर्वस्व जीवन उनका आदर्श न था। देश के स्वतंत्रता के बाद उन्होंने दादी के गोले में कुछ पुस्तकें, विद्यालयीय सामग्री रखकर पुस्तक व्यवसाय की शुरुआत तो की थी, पर अब तीस वर्ष के जवान भगवती प्रसाद ने कपड़े के व्यवसाय से अपने को अलग कर संपूर्ण रूप में पुस्तक-व्यवसाय में रमने का निश्चय किया। इसके निमित्त दौलेश्वर दत्त एवं यदुनाथ सइकिया से उन्हें प्रोत्साहन मिला। सन् 1950 ई. में स्थापित गोलाघाट कॉलेज (देवराज राय कॉलेज) ने इसमें अनुघटक का काम किया। स्वयं आनुष्ठानिक शिक्षा से वंचित रहने पर भी ज्ञानार्जन एवं ज्ञान-विस्तार की योजना से कपड़े का व्यवसाय त्यागकर पुस्तक व्यवसाय के प्रति वे उन्मुख हुए। दादी के कपड़ों के बीच से भगवती प्रसादजी निकल आये महकने वाले ग्रंथों की दुनिया में- एक नवीन विश्वास से एक नए क्षेत्र में आगे बढ़ने के लिए, ज्ञान का अमृत बांटकर समाज को निर्मल बनाने के लिए, विद्वतजनों के संग-सुख प्राप्त करने के लिए, मनीषियों के ज्ञान-

विज्ञान से अपने को आलोकित करने और दूसरों को भी प्रेरित करने के लिए, समाज को सुंदर-सुसंस्कृत करने के सपनों को साकार करने के लिए, जातीय जीवन के उत्तरण के पथ को प्रशस्त करने के लिए। तीस वर्ष की आयु के एक मारवाड़ी युवा का यह था एक भागीरथी संकल्प, एक अभिनव यात्रा, एक नए संसार में प्रवेश करने की प्रस्तुति, परंपरा को तोड़ने का साहस, एक आदर्श पाथेय सृजन करने की अभिलाषा और सर्वोपरि समाज-जीवन को उत्कर्ष के पथ पर ले जानेवाला ज्ञान-यज्ञ के लिए प्रदान करने वाली आहुति।

भगवतीया की दुकान : भगवती प्रसाद लडियाजी ने सन् 1950 ई. में पुस्तक-व्यवसाय का प्रारंभ किया था, प्रतिष्ठान का नाम रखा- **नवीन पुस्तक भंडार**। गोलाघाट वासियों के लिए प्रचलित 'दादी का गोला' नाम के साथ इस नए नाम को स्वीकार करने में कुछ वक्त लगा। एक नया नाम प्रचलित हुआ 'भगवतीयार दोकान' (भगवती की दुकान)। इस संबंध में गोलाघाट के पुस्तक व्यवसायी श्री **क्षीरोद कुमार गोस्वामीजी** का उद्गार इस प्रकार है :

लडियाजी की जो ग्रंथ-प्रीति है, जो साहित्य-प्रीति है उसके प्रति एक-एक अनाविल स्नेह-दृष्टि के निमित्त ही पिछली शती के किसी एक शुभ अवसर पर 'नवीन पुस्तक भंडार' की शुरुआत हुई थी। मध्य एवं ऊपरी असम के ग्रंथ आंदोलन को एक मनोमय रूप प्रदान करने में इस प्रतिष्ठान की उल्लेखनीय देन आज स्वीकृत हुई है। गोलाघाट के स्थानीय लोगों में तब 'नवीन पुस्तक भंडार' का नाम लोकप्रिय न था। संभवतः इसके संस्थापक एवं संचालक जिस प्रकार के सीधे-सादे घमंडहीन व्यक्ति थे, उनके व्यक्तित्व के तले यह नाम दब गया था। दुकान का नामकरण आम लोगों ने भगवती प्रसाद लडिया के नाम से किया था- भगवतीयार दोकान (भगवतीया की दुकान)। यह नाम आमतौर पर प्रचलित था। जिले के हर कोने में इस नाम से नवीन पुस्तक भंडार को जाना जाता था। यह निश्चय उन स्मरणयोग्य व्यक्तित्व के प्रति दिखाया गया आदर और स्नेह है। आज भी पुराने लोग 'भगवतीया की दुकान' कहने पर ही पहचानते हैं। चार दशकों से पुस्तक-व्यवसाय से जुड़े रहने के अनुभवों से ऐसे अनेक लोगों से मैं मिला हूँ और आज भी मिलता रहता हूँ।

(प्रकाशकर डायरी-बंदी टोका, 2017 ई., पृ. 16)

आदर्श पुस्तक की दुकान : भगवती प्रसाद लडियाजी ने एक किताब की दुकान खोलने के नाम पर दुकान नहीं खोली थी; इसे एक आदर्श पुस्तक की दुकान बनाने के लिए जी-जान से मेहनत की थी। कपड़े व्यवसाय के सिलसिले में लडियाजी को कभी-कभी कलकत्ता जाना पड़ता था, वहाँ वे किताबों की दुकानों पर भी जाते थे। इसी संदर्भ में 'हिंदी प्रचारक संस्थान', वाराणसी के कृष्णचंद्र बेरीजी का नामोल्लेख किया जा सकता है। बेरीजी की एक पुस्तक दुकान कलकत्ता में भी थी और वे समयांतर पर वाराणसी तथा कलकत्ते की दोनों दुकानों पर बैठते थे। लडियाजी से बेरी जी का मधुर संबंध बना था और उनके प्रकाशन से कुछ पुस्तकें वे मंगाते रहते थे। सामान्यतः वे नेशनल बुक ट्रस्ट, साहित्य अकादेमी; गीताप्रेस, गोरखपुर; असम प्रकाशन परिषद, असम साहित्य सभा से मूल्यवान ग्रंथ मंगाते थे। साथ ही वे हमेशा ध्यान रखते थे कि भारतीय और विदेशी भाषा से असमिया में अनूदित अच्छी कृतियों का स्वाद पाठकों को निश्चय रूप से प्राप्त हो। असमिया, हिंदी, अंग्रेजी ग्रंथों को उन्होंने अलग-अलग रैंकों पर सजा कर रखते थे।

जीविका के निमित्त पाठ्य-पुस्तकें, स्कूल-कॉलेज में व्यवहृत सामग्री-कागज, कलम, स्याही, पेंसिल इत्यादि रखते थे, जिससे कोई ग्राहक लौट न जाए।

कुछ दुकानदार केवल पाठ्य-पुस्तकें, कुछ असमिया या अंग्रेजी की पुस्तकें रखते थे; परंतु इस मामले में लडियाजी व्यतिक्रम थे। वे असमिया भाषा में प्रकाशित ग्रंथों को मंगवाते थे, चरित्र निर्माण हेतु मनीषियों की जीवनियों को संग्रह करके रखते थे। स्कूल-कॉलेजों के पाठ्य-पुस्तकों के नाम उनके स्मरण में रहते थे और इसी अनुसार ग्राहकों की मांग पूरी करते थे।

लडियाजी ने नवीन पुस्तक भंडार को केवल एक किताब की दुकान में ही सीमित न रखकर इसे पुस्तकालय रूप प्रदान किया था। लंबे-चौड़े दुकानों के रैंकों और अलमारियों में बहुत ऊपर तक पुस्तकें सजी रहती थीं। कोई भी ग्राहक अपने अनुसार असमिया, अंग्रेजी, हिंदी की पुस्तकें खोज सकते थे।

लडियाजी को विश्वास था कि अच्छे ग्रंथ सहसा उपलब्ध होने पर ही वैसे ग्रंथों के ग्राहक बढ़ेंगे। पाठकों की साहित्य-रुचि बढ़ाने की जिम्मेदारी पुस्तक व्यवसायी का भी होता है, ऐसा उन्हें दृढ़ विश्वास था। इसीलिए पाठकों की रुचि एवं स्तर के अनुसार वे नई पुस्तकों की ओर ध्यान दिलाते थे।

सन् 1958 ई. में गोलाघाट के 'दास एंड कंपनी' ने उनके पास रहने वाली

असमिया, बांग्ला, हिंदी, अंग्रेजी भाषाओं के अखबार की एजेंसी छोड़ने पर भगवती प्रसादजी ने इसे स्वीकार किया। नवीन पुस्तक भंडार में पत्र-पत्रिकाओं की एजेंसी होने के कारण ग्राहकों की संख्या में वृद्धि होती है। इस विभिन्न पत्र-पत्रिकाएं पढ़कर भगवतीजी ने अपना ज्ञान बढ़ाया था। असमिया पत्र-‘नतुन असमीया’, ‘जन्मभूमि’, हिंदी का ‘विश्वामित्र’ वे स्वयं पढ़ते थे। परवर्ती समय में गुवाहाटी से प्रकाशित ‘पूर्वांचल प्रहरी’, ‘सेंटिनल’ आदि वे नियमित पढ़ते थे और इनमें लिखते भी थे। सन् 1958 से 1972 ई. तक लगातार पंद्रह वर्षों तक नवीन पुस्तक भंडार ने एजेंसी चलाने के बाद इसे मझले बेटे सोहनलाल लडिया को सौंप दिया, जो पूर्व में ‘पत्रिका संस्थान’ और अब ‘सूर्य प्रकाश’ के नाम से चालू है।

लडियाजी का आदर्श था गांधीजी के रचनात्मक कार्यक्रमों के अन्यतम खादी का प्रचार। पुस्तक-व्यवसायी होने पर भी उन्होंने खादी कपड़े का व्यवसाय छोड़ा नहीं था। गणतंत्र दिवस, स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर वे खादी पताका आदि मौजूद रखते थे, जो उनके देश-प्रेम का परिचायक था। फलतः ‘नवीन पुस्तक भंडार’ एक आदर्श दुकान की गरिमा से कीर्तिमान हो उठा।

नवीन पुस्तक भंडार के प्रति विद्वतजनों की सम्मतियां : भगवती प्रसाद लडिया और नवीन पुस्तक भंडार एक दूसरे के पर्याय बन गए थे। इसे सबने स्वीकार किया है। इस संबंध में कतिपय विद्वतजनों की सम्मतियां ध्यातव्य हैं, जो विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं :

□ **डॉ. नगेन सड़किया :** भगवती प्रसाद लडिया ही नवीन पुस्तक भंडार है और नवीन पुस्तक भंडार ही भगवती प्रसाद लडिया है। नाटे कद के सज-धज में खादी के धोती-कुर्ता पहनने वाले, ऊपर से एक जवाहरी कोट। प्रचार विमुख यह व्यक्ति स्वयं एक गहन भारतीय चेतना के प्रतीक हैं। असम तथा भारत की जातीय समस्याओं और जातीय संस्थाओं से भी उनका नजदीकी संबंध है। गोलाघाट के सामाजिक राजनीतिक, सांस्कृतिक इतिहास के वे अर्द्ध शताब्दी से ऊपर काल के साक्षी हैं। एक जमाने में नवीन पुस्तक भंडार केवल एक पुस्तक बिक्री केंद्र ही नहीं था, बल्कि गोलाघाट के बौद्धिक जीवन का अत्यंतम मिलन केंद्र था।

□ **चंद्रप्रसाद सड़किया :** संस्कृतिवान, साधु भागवती प्रसाद लडियाजी ने कपड़े का व्यवसाय छोड़कर नवीन पुस्तक भंडार के माध्यम से पुस्तक प्रकाशन का दायित्व लिया है। कुछ दिनों में वह दुकान गोलाघाट शहर के कुछ संख्यक साहित्यकारों का संगम-स्थल में परिणत होता है। इस प्रतिष्ठान से अब तक कई महत्वपूर्ण ग्रंथों

का प्रकाशन हुआ है। नए लेखकों के कई ग्रंथों को प्रकाशित करके उन्होंने हमारी भाषा की श्रीवृद्धि की है।

□ **राम गोस्वामी :** भगवती प्रसाद लडियाजी ने सन् 1950 ई. में ‘नवीन पुस्तक भंडार’ की स्थापना की। यह प्रतिष्ठान उनकी मर्यादा का प्रतीक बना। अनेक जाने-अनजाने लेखकों की पुस्तकें छापकर असमीया भाषा-साहित्य की उन्नति के लिए आदर्शपरक कार्य किया। गोलाघाट जाने पर मैं निश्चित रूप से नवीन पुस्तक भंडार जाता हूँ। इस व्यस्त दुकान में जाकर अच्छा लगता है। जहां-तहां केवल पुस्तक ही पुस्तक। भगवतीजी के नखदर्पण में कौन-सी पुस्तक कहां है जानकर हैरान होता हूँ। स्वयं पढ़कर मगन रहते हैं। सज्जनों की मिलनभूमि है उनकी दुकान और उनका घर। मुझसे थोड़े बड़े होने पर भी मेरे चहेते दोस्त हैं। उनके आदर की कोई सीमा नहीं है।

□ **विश्वेश्वर हाजरिका :** सन् 1953 ई. में प्रवेशिका उत्तीर्ण होकर 1950 ई. में स्थापित गोलाघाट कॉलेज, बाद में देवराज राय कॉलेज में दाखिला लेता हूँ। हमारे परिचित यदुमणि छापखाना में दो-चार पुस्तकें तो मिलीं, परंतु मेरे विषय में लॉजिक या तर्कविज्ञान की कोई पुस्तक नहीं मिली। साथियों ने बताया कि उन्हें नवीन पुस्तक भंडार से मिली।

नवीन पुस्तक भंडार में प्रवेश करने पर एक मूछवाले गोरे व्यक्ति ने पूछा-क्या पुस्तक चाहिए? मैंने पुस्तक का नाम बताया। डिडक्विट चाहिए या इंडक्विट चाहिए- उन्होंने पूछा। मैंने कुछ न समझकर पुस्तक और लेखक का नाम बताया।

उन्होंने कहा, ‘समझा। इसके दो खंड हैं। एक खंड फर्स्ट इयर में पढ़ाता है और दूसरा खंड दूसरे इयर में।’ संकेत समझकर मैंने कहा, ‘फर्स्ट इयर वाली’ चाहिए। उन्होंने मुझे डिडक्विट लॉजिक खंड दिया।

एक पुस्तक दुकानदार को मेरी जरूरतवाली पुस्तक का सही नाम बता न पाकर लज्जित हुआ। मुझसे तो दुकानदार अच्छी तरह जानते हैं। अखबारों में लेख लिखने वाला, असमीया वर्तनी के संबंध में ‘हेमकोष’ का मत बतलाने वाला और कविता के संबंध में साथियों के सामने लंबा भाषण देने वाला मैं कुछ सकुचा गया।

यही थे नवीन पुस्तक भंडार के प्रतिष्ठापक एवं मालिक भगवती प्रसाद लडियाजी।

नवीन पुस्तक भंडार के खुले रैकों पर पुस्तकें सजी रहती थीं। स्वयं खोजा जा सकता था। पुस्तकों के नाम पढ़कर खरीदने के लिए सोची हुई पुस्तकें हाथ में

पैसा रहने पर खरीदी जा सकती थी। बाद में पता चला कि परिचित होने पर उधार में भी पुस्तक ली जा सकती है।

हमारे ही एक साथी एक पुस्तक आच्छादित करके पढ़ रहा था। पुस्तक के प्रति अत्यधिक स्नेह देखकर पूछा कि इसका क्या कारण है? तब उसने बताया कि इस पुस्तक को खरीदने के लिए उसके पास पैसा नहीं है। इसलिए नवीन पुस्तक भंडार से उधार में लाया है। दो वर्षों के बाद पुस्तक को गंदा न करके लौटा देना होगा। तब मैं समझा उस पुस्तक के प्रति उसका इतना आकर्षण क्यों है। इससे पता चला कि गरीब विद्यार्थी को नवीन पुस्तक भंडार पुस्तक देकर सहायता भी करता है।

कौन-सी नई पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं, उसे जानने के लिए नवीन पुस्तक भंडार जाते ही काम चल जाता। नई पुस्तकों को करीने से आंखों के सामने सजाकर रखा जाता है। रैकों के बीच में कुर्सियां लगी रहती हैं। वहां देखता हूं हमारे कई साथी एक-एक उपन्यास लेकर पढ़ रहे हैं। जान सका जिसकी जो मर्जी वह उसी तरह बैठकर पढ़ सकता है। घर ले जाने की अनुमति नहीं होती। पुस्तक की दुकान पुस्तकालय में बदल जाती है।

गोलाघाट जाने पर नवीन पुस्तक भंडार में जाने का नियम-सा हो गया था। मेरे लिए आवश्यक और कहीं न मिलने वाली कोई पुस्तक यहां मिल भी सकती है। ऐसा भी हुआ है। वैसी एक पुस्तक है गीताप्रेस से प्रकाशित रामधर शुक्ल शास्त्री संपादित 'श्री जैमिनीयाश्वमेध पर्व'। हरिहर विप्र (हरिबर नहीं, हरिबर स्मृति शास्त्री बड़े भैया का नाम है) के 'लव-कुशर युद्ध', 'बब्रुवाहनर युद्ध' और 'ताम्रध्वजर युद्ध' के मूल स्रोत यह ग्रंथ है। सन् 1968 ई. में पाकर इसे खरीद लिया।

श्रीमंत शंकरदेव के भागवत व कीर्तन-घोषा का मूल आधार संस्कृत भागवत देखा नहीं था। कहां उपलब्ध है उसे भी पता न था। गीताप्रेस से प्रकाशित 'श्रीमद्भागवत महापुराणम्' (2024 संवत् या 1967 ई.) नवीन पुस्तक भंडार में पाकर 'बिन खोजे मोती पाने' की तरह हालत हुई। सन् 1973 ई. में मूल भागवत खरीद लिया। उसकी कीमत थी सात रुपए पचास पैसे।

□ **नीलमणि फुकन** : स्कूली जीवन के समय देरगांव में किताब की दुकान न के बराबर थी। मैं पुस्तक खोजने में लिए प्रायः जोरहाट के बरकटकी एंड कंपनी, हाजरा बुक स्टॉल और गोलाघाट के यदुमणि छापाखाना तथा नवीन पुस्तक भंडार जाता था। पुस्तक खरीदने के बजाए देखने के लिए जाता था। उस समय पुस्तकें खरीदने की हैसियत भी नहीं थी। इसी तरह जाते रहने पर नवीन पुस्तक भंडार के

मालिक भगवती प्रसाद लडिया से जान-पहचान हुई। नवीन पुस्तक भंडार ने उस समय हम जैसे युवकों के बीच अध्ययन का एक माहौल उत्पन्न किया था। अनेक पुस्तकों एवं लेखकों से हमें परिचय कराया था। नवीन पुस्तक भंडार जाने पर मैं अक्सर लडियाजी को अखबार पढ़ते हुए देखता था। कौन-सी नई पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं, उनकी वे सूचना देते थे। कौन-सी पुस्तकें पढ़नी चाहिए उसे वे बताते थे। इस विद्योत्साही नवीन पुस्तक भंडार ने कई असमिया ग्रंथों का प्रकाशन किया है। श्री लडियाजी अनेक राष्ट्रीय पत्रों में लिखते थे।

□ **जेहिरूल हुसैन** : गोलाघाट के चौक बाजार में ऐतिहासिक 'धोदर अली' के पास भगवती प्रसाद लडियाजी का नवीन पुस्तक भंडार नगर का एक विशिष्ट पुस्तक विक्रय केंद्र है। उस समय गोलाघाट में केवल पुस्तकों की दो बड़ी दुकानें थीं। एक स्वर्गीय पूर्णचंद्र गोस्वामीजी का 'यदुमणि छापाखाना' और दूसरा नवीन पुस्तक भंडार। नवीन पुस्तक भंडार में हमेशा हिंदी, असमीया, अंग्रेजी पुस्तकें भरी रहती थीं। साथ ही कागज, कलम, पेंसिल आदि स्टेशनरी सामान। यह दुकान ही था नगर के विभिन्न चिंताविदों, लेखकों, शिक्षकों, अध्यापकों का बौद्धिक केंद्र तथा मिलन स्थल। वहां जब भी जाता हूं तब देखता हूं रैक में किताब खोजने वाले पाठक। एक कोने पर विनय की मुस्कराहट बिखरते हुए बैठे रहते हैं आदरणीय भगवती प्रसाद लडियाजी।

□ **लक्ष्मीकांत महंत** : गोलाघाट में कॉलेज स्थापित होने पर उस कॉलेज में असम के बाहर से आने वाले कई अध्यापकों से भगवती प्रसाद लडियाजी की आत्मीयता हो गई थी। पुस्तक की दुकान के अतिरिक्त शिक्षा-संस्कृति के प्रति लडियाजी के आग्रह के कारण ये लोग खींचे चले आते थे। हिंदी और असमिया दोनों भाषाओं को वे आसानी से बोल लेते थे।

लडियाजी को उन अध्यापकों के माध्यम से दुकान पर अच्छी-अच्छी किताबें लाने के सुझाव मिलते रहते थे। केवल बहिरागत अध्यापकों से ही लडियाजी का अच्छा संबंध था, ऐसा नहीं था, स्थानीय अध्यापकों से भी उनका मधुर रिश्ता था। ऐसा कि स्थानीय अध्यापकों और कॉलेज संचालन समिति के अधिकारी एवं सदस्यों से उनका गहन संबंध होने के कारण ही बहिरागत अध्यापकों को लडियाजी से संपर्क स्थापित करने में प्रोत्साहित मिलता था। अवश्य यह स्वीकार किया जाएगा कि असमिया और हिंदी दोनों भाषाओं में उनकी व्युत्पत्ति रहने के कारण बाहर से आने वाले अध्यापकों को उनसे बातचीत करने में सहूलियत होती। प्रथमावस्था में बाहर

से आने वाले दो अध्यापकों से- संस्कृत के अध्यापक सत्यनारायण शास्त्री और अंग्रेजी के अध्यापक राजकुमार कोहली से उनका घनिष्ठ संबंध बना था।

इसी तरह कॉलेज की प्रतिष्ठा होने के उपरांत लडियाजी को पुस्तक व्यवसाय बढ़ाने का स्वर्ण अवसर मिला। साथ ही लडियाजी की दुकान में ही एक बौद्धिक वातावरण बना। विभिन्न पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं के द्वारा लडियाजी ने गोलाघाट नगर में एक बौद्धिक परिमंडल का सृजन किया। इसमें लडियाजी का वैयक्तिक अध्ययन, वैयक्तिक उत्साह और दूसरे लोगों को बौद्धिक चिंता-चर्चा में प्रेरित करने वाला व्यक्तित्व अनेकों के लिए प्रेरणा के स्रोत बने।

□ **बिमल अगरवाल :** 'नवीन पुस्तक भंडार' के स्वत्वाधिकारी भगवती प्रसाद लडियाजी की प्रेरणा से ही गोलाघाट जिले में अनेक ग्रंथ व्यवसायियों का जन्म हुआ है- इस कथन में कोई अत्युक्ति नहीं। मैं स्वयं उनकी प्रेरणा से सन् 1962 ई. से बादुलीपुरा में 'स्कूल पुस्तक भंडार' नामक पुस्तक प्रतिष्ठान द्वारा ग्रंथ-प्रेमियों के बीच आज भी व्यवसाय कर रहा हूँ। हमारे दुकान के नाम से ही सिद्ध होता है कि यह नवीन पुस्तक भंडार का भातृ-प्रतिष्ठान है। हमारी तरह अनेकों को किताब व्यवसाय द्वारा स्वावलंबी बनने की प्रेरणा देने के कारण गोलाघाट जिले में पुस्तकों की दुकानों की संख्या बढ़ी है। उन्होंने विद्यालय के शिक्षकों को विशेषतः गैर-सरकारी विद्यालयों के शिक्षकों को पुस्तक व्यवसाय करने के लिए सुझाव देते हुए कहते थे, 'गैर सरकारी स्कूल में जब काम कर रहे हैं, तब वेतन भी उतना मिलता न होगा, इसलिए शिक्षकता के साथ अपने-अपने इलाकों में या बाजारों में पुस्तक बिक्री का व्यवसाय करने पर जब खर्चा निकाल पाएंगे।'

□ **बौद्धिक अड्डा : गद्दी प्रसंग :** भगवती प्रसाद लडियाजी का 'नवीन पुस्तक भंडार' केवल एक किताब की दुकान नहीं थी, बल्कि यह एक पुस्तकालय, पाठागार, दुर्लभ पत्र-पत्रिकाओं का भंडार, देश-विदेश के समाचारों से अवगत होने के लिए अखबारों का स्रोत भी था, सर्वोपरि इसकी गद्दी थी गप्पियों की बौद्धिक चिंता-चर्चा की जगह। इस 'गद्दी' पर बैठकर ही बुद्धिजीवीगण कॉफी हाऊस की अड्डा का मजा लुटते थे।

बयालीस के आंदोलन के समय गोलाघाट जेल के जेलर रहने वाले सुरसिक, अध्ययनशील तीर्थनाथ भट्टाचार्य प्रायः इस दुकान पर आते थे। उनकी लडियाजी से काफी दोस्ती हो गई थी। उनका पुत्र कवि हीरेन भट्टाचार्य गोलाघाट में ही पढ़ते थे। बिक्री कर विभाग में काम करने वाले भूमिदेव गोस्वामी आते थे। लोक साहित्य

के मधुकर बरपेटा-सुंदरीदिया के श्री रामचंद्र दास ने गोलाघाट में नौकरी करते समय यहां आकर लडियाजी के मन में लोक साहित्य के प्रति आकर्षण जगाया था। शायद इसलिए परवर्ती समय में लडियाजी डॉ. लीला गगै की पुस्तक 'असमीया लोक साहित्य की रूपरेखा' छापने के लिए प्रेरित हुए थे। बौद्धिक स्तर का कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है, जो गोलाघाट आने पर नवीन पुस्तक भंडार में न आया हो और लडियाजी से वार्तालाप न किया हो।

नवीन पुस्तक भंडार की 'गद्दी' और इसमें बैठकर वार्तालाप द्वारा बौद्धिक वातावरण बनाने के संबंध में गोलाघाट के श्री क्षीरोद कुमार गोस्वामी और देवराज राय कॉलेज के असमीया विभाग के पूर्व अध्यापक डॉ. हेम बरा के उद्गारों के माध्यम से इसकी विशेषताएं एवं प्रातः स्मरणीय व्यक्तियों की एक सूची देखी जा सकती है।

□ **श्री क्षीरोद कुमार गोस्वामी :** वर्तमान के 'धोदर आलि' के उत्तर में जो 'ज्योति पुस्तक मंदिर' का व्यवसाय गृह है, वही पर एक टीना लगाया हुआ आसाम टाइप के घर में 'नवीन पुस्तक भंडार' का व्यवसाय चलता था। उस समय के तीन पुस्तकों की दुकानों ने खुदरा बिक्री में असम में एक इतिहास कायम किया था। तिनसुकिया की 'मित्र एजेंसी', लखीमपुर का 'गाजी बुक स्टॉल' और गोलाघाट के 'नवीन पुस्तक भंडार' ने। दुकान में ग्राहकों की कतार लगती थी, चाहे वह पाठ्य-पुस्तकों के लिए हो, या अन्य पुस्तकों के लिए। दुकान के बीचों-बीच उत्तर-पूर्वी ओर एक लकड़ी के बड़े तख्त पर मोटी गद्दी और चादर बिछाकर बैठने की जगह। वहीं पर दैनंदिन बैठक चलती थी। बैठकों में भाग लेने वाले साहित्य, ग्रंथ, अखबार आदि के विषयों में मगन। लकड़ी के उस तख्त को 'गद्दी' के नाम से जाना जाता था। गोलाघाट के विद्वतजनों के लिए इस गद्दी का आकर्षण कम न था, जिससे एक बौद्धिक वातावरण बना था। आज वह आसाम टाइप का घर, गद्दी पर होने वाली बैठकें, लडियाजी का मनोहर व्यक्तित्व केवल स्मृतिशेष हैं।

(प्रकाशकर डायरी-बंदी टोका, पृ. 16-17)

□ **डॉ. हेम बरा :** असम के पुराने ग्रंथ-दुकानों में अन्यतम 'नवीन पुस्तक भंडार' को समग्र राज्य में एक अग्रणी प्रतिष्ठान के रूप में स्थापित कर भगवती प्रसाद लडियाजी ने एक आदर्श दिखाया है। नवीन पुस्तक भंडार एक ऐसी पुस्तक की दुकान थी, जहां असमीया भाषा में प्रकाशित सभी प्रकार के ग्रंथों के साथ हिंदी, संस्कृत, बांग्ला आदि भाषाओं में प्रकाशित मूल्यवान ग्रंथों को रखा जाता था। केवल

गोलाघाट के ही नहीं, समग्र असम से जिज्ञासु शोधकर्ता पुस्तकों की खोज में नवीन पुस्तक भंडार आते थे। भगवती प्रसाद लडिया ने आवश्यकीय ग्रंथों को अपने से ही खोज लेने की अनुमति दी थी। लडियाजी के संग्रहित ग्रंथों में अनेकों को आशा की किरण दिखाई दी थी।

साठ के दशक के प्रारंभ से नवीन पुस्तक भंडार से जुड़ी हुई एक गद्दी काफी लोकप्रिय हो चुकी थी। यही थी भगवती प्रसाद लडियाजी की गद्दी। यह गद्दी विभिन्न गुणी-ज्ञानियों की मिलन स्थली बनी थी। जिला के चुने हुए लोगों के अतिरिक्त दूसरे लोग भी विभिन्न विषयों की जानकारी लेने आकर इसी गद्दी में सुस्ताते थे। इसी तरह विभिन्न प्रतिभाओं का समावेश हुआ था। भगवतीजी की गद्दी में न बैठने वाले लोग शायद ही मिल पाए। इस गद्दी को मनोरंजन क्लब, कॉफी हाऊस की अड्डा से तुलना की जा सकती है। पश्चिम की तरह कलकत्ते (कोलकाता) में भी मध्यमवर्गीय कलाकार, साहित्यकार, चिंतविदों के लिए प्रसिद्ध होने वाले कॉफी हाऊस में अड्डा देने वालों की तरह शाम को लडियाजी की गद्दी पर प्रबुद्धजनों का समावेश होता। इन लोगों में होते थे स्वतंत्रता संग्राम के सह-योद्धागण- बैकुंठनाथ सिंह, ध्यानदास शर्मा, राजेंद्र नाथ बरुवा, केशव सोनोवाल, आपिराम गगै, नरेन शर्मा, भद्र फुकन, सुरेन फुकन, ठगी भलंटियार, दंड हाजरिका, चानु खेरिया आदि विभिन्न स्थानों से पधारने वाले मुक्ति योद्धागण स्वातंत्र्योत्तर भारत की समस्याओं पर चर्चा करते। राज्य के विभिन्न स्थानों से गोलाघाट पधारने वाले लोग भी भगवतीजी की गद्दी तक पहुंच ही जाते थे। इन लोगों में कुछ उल्लेखनीय व्यक्तित्व हैं-कामाख्या प्रसाद त्रिपाठी, विश्वनारायण शास्त्री, कालीचरण दास, हरेंद्रनाथ बरुवा, कीर्तिनाथ हाजरिका, अयोध्या प्रसाद गोस्वामी, राम गोस्वामी, लीला गगै, नीलमणि फुकन, दधि महंत, रोहिणी काकती, बेदब्रत बरुवा, हरि बरकाकती, बीरेन बरकटकी, विनंद चंद्र बरुवा, आनंद चंद्र बरुवा, सैयद अब्दुल मालिक, हरि प्रसाद बरुवा इत्यादि। ये लोग भले ही भगवतीजी की गद्दी पर बैठकर अड्डा न देते होंगे पर अनेक बातों के लिए आकर मिलते जरूर थे। जिले के साहित्य-संस्कृति से जुड़े चिदानंद सइकिया, गोलाप खाउंड, कमलेश्वर राजखोवा, ललित बरुवा, लक्ष्मी कांत महंत, हरकांत महंत, आनंद शर्मा, माखन प्रसाद दुवरा, हरीश चंद्र गोस्वामी, दीन तामुली आदि की तरह अनेकजनों को नवीन पुस्तक भंडार की गद्दी पर देखे जाते थे। डॉ. देवप्रसाद बरुवा, बेदब्रत बरुवा, सोनेश्वर बरा, योगेन बरुवा, पूणी हाजरिका, नीलकांत हाजरिका आदि विभिन्नजनों के साथ तबिउल हुसैन, हेम बरा, विश्वेश्वर हाजरिका, उपेन

फुकन, कमल हाजरिका, केशव शइकिया, नागेंद्र शर्मा आदि के साथ नई पीढ़ी के लेखकगण भी यहां मिलते थे। इन सभी को भगवती प्रसाद लडियाजी से कोई न कोई उपकार अवश्य मिला होगा।

भगवती प्रसाद लडिया की गद्दी की विशेषता है इस पर पहाड़ों जैसे ग्रंथ-पत्रिका आदि के स्तूपों की भरमार। असमिया सभी पत्र-पत्रिकाओं के साथ हिंदी में 'विश्वामित्र' से 'अकेला' तक, इलास्ट्रेटेड वीकल से सरस्वती पत्रिका तक अनेक पत्र-पत्रिकाएं गद्दी पर पहुंचने वाले पढ़ सकते थे। स्वतंत्रता पूर्व के अनेक पत्र-पत्रिकाओं का संग्रह भी भगवती प्रसाद ने यत्नपूर्वक किया था। 'आवाहन', 'जयंती', 'पछोवा' आदि अनेक पत्रिकाओं में द्वितीय विश्व युद्ध के आगे-पीछे की असमिया साहित्य की गतिविधि की अनेक बातें संरक्षित हुई थीं। विशेषतः प्राचीन पत्रिकाओं में से कमलनारायण देव और चक्रेश्वर भट्टाचार्य द्वारा संपादित 'जयंती' पत्रिका के सभी अंकों को लडियाजी ने अलग से संरक्षित किया था। इसका कारण था कमलनारायण देव के साथ उनकी आत्मीयता। इस आत्मीयता का कारण है हिंदी भाषा-साहित्य के प्रति उनका अत्यधिक लगाव। जयंती की त्रिमूर्ति के अन्यतम कमलनारायण देव असम में हिंदी शिक्षक के रूप में आए थे। तब तक बिहार, उत्तर प्रदेश में पनपने वाली प्रगतिवादी विचारधारा ने कमलनारायण को स्पर्श किया था। अतः गुवाहाटी के उजान बाजार के अड्डे से कमलनारायण के साथ चक्रेश्वर भट्टाचार्य एवं दार्शनिक अध्यापक भवानंद दत्त के सहयोग से नए रूप में 'जयंती' का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। उस समय भगवती प्रसादजी कांग्रेस आंदोलन से जुड़े हुए थे। तत्कालीन स्वतंत्रता आंदोलन में कम्यूनिस्टों ने इसकी धारा में यद्यपि परिवर्तन लाया था, परंतु कांग्रेसियों के साथ इन लोगों का कोई आग-पानी जैसा रिश्ता न था। भगवती प्रसाद को मुख्यतः आकर्षित किया था बैकुंठनाथ सिंह और शंकर चंद्र बरुवा ने। इसीलिए लडियाजी गोलाघाट जिले के सशस्त्र वाहिनी की अनेक अंदरूनी बातें जानते थे। परंतु वे ध्यानदास शर्मा के सहयोगी थे। वस्तुतः ध्यानदास शर्मा के आवास पर ही बैकुंठनाथ सिंह आदि उग्रवादी गुट के सदस्य मिलते थे। स्वतंत्रता के बाद ये सभी आकर भगवती प्रसाद की गद्दी पर आसन जमाते थे। इस गद्दी का स्वरूप अनेकजनों के लिए 'सेतुबंधन' जैसा हो गया था।

(आरावलीर परा धनशिरी लै, 2006 ई. पृ. 10-12)

□ नवीन पुस्तक भंडार का प्रकाशन : सन् 1950 ई. में स्थापित नवीन पुस्तक भंडार ने दस-बारह वर्षों में असम की उल्लेखनीय पुस्तक दुकान की गरिमा

प्राप्त की थी। धीरे-धीरे लडियाजी ग्रंथों के प्रकाशक के रूप में सामने आते हैं। सन् 1964 ई में नवीन पुस्तक भंडार से प्रकाशित प्रथम पुस्तक है **तबिउल हुसैन** का नाटक 'चानदा बिचारि' (चन्दा मांगने)। हुसैनजी गोलाघाट के बेजबरुवा सरकारी हाई स्कूल में शिक्षक थे, पर उसी वर्ष असामरिक सेवा के लिए चुने जाने पर वे सरकारी नौकरी पर चले गए थे। सन् 1968 ई. में प्रकाशित डॉ. लीला गगै की 'असमीया लोक-साहित्यर रूपरेखा' एक मूल्यवान कृति है। सन् 1978 ई. में गोलाघाट में असम साहित्य सभा का अधिवेशन होने के कारण नव-निर्वाचित सभापति प्रसन्न लाल चौधुरी पर नंद तालुकदार रचित 'प्रसन्नलाल' एवं डॉ. हेम बरुवा कृत 'गोलाघाटर इतिकथा' (गोलाघाट का इतिहास) के प्रकाशन किये गये थे। संख्याधिक्य न होने पर भी इस प्रकाशन से कई उल्लेखनीय कृतियां प्रकाशित हुई थीं। अवश्व इनमें कुछ पाठ्य-पुस्तकें भी हैं। प्रकाशित ग्रंथों की सूची इस प्रकार है-

तबिउल हुसैन	: चांदा बिचारि
डॉ. लीला गगै	: असमीया लोक-साहित्यर रूपरेखा
हितेश डेका	: आजिर मानुह
रोहिनी कुमार काकति	: सूर्यरेखा
तीर्थनाथ शर्मा	: गांधी शिक्षा सार
आनंद चंद्र बरुवा	: विजया (नाटक)
	: बिसर्जन (नाटक)
नंद तालुकदार	: प्रसन्नलाल
डॉ. लक्ष्मीरा दास	: अंतर्गत नदी (कविता)
धीरेश्वर भट्टाचार्य	: श्रीमद्भागवत गीता
पद्मनाथ गोहाई बरुवा	: लाहरी
दीननाथ शर्मा	: नदाइ
डॉ. हेम बरा	: गोलाघाटर इतिकथा
	: भारत निर्माता
	: भारत रत्न डॉ. राजेंद्र प्रसाद
	: पंडित हेमचंद्र गोस्वामी साहित्य प्रतिभा
	: कलागुरु विष्णु राभा
	: मरम पिपासी मन
	: चेनाइर चकुले चाबके नोवारि (बिहू गीत)

	: ऊनविंश शतिकार असमीया साहित्य आरु हेमचंद्र बरुवा
	: रूपकोंवर ज्योतिप्रसाद
केशव शङ्किया	: आजि मोर मन
	: दुजन असमीया कविर प्रेमर काहिनी
नारायण दास	: आइतार मरम
सुरेंद्र कुमार दास	: भूतर काहिनी
कृष्णकांत भट्टाचार्य	: चांद सदागरर काहिनी
लक्ष्मीकांत महंत	: रडीन दलिचा
दीन तामुली	: देवी ने दानबी
गणेश चंद्र गगै	: शकुनिर प्रतिशोध
रविचंद्र शर्मा	: बनौषधि द्रव्यर गुण आरु व्यवहार

पाठ्य-पुस्तक

दंडधर हजारिका	: प्राथमिक भाषातत्त्व
श्रीकांत कलिता (सं.)	: कुमार हरण काव्य
तिलक बरा (सं.)	: चोर धरा पिम्परा गुचोवा झुमुरा
दंडीराम दत्त	: नतुन मौखिक पाठ
बेथाराम बरा	: मुकुल पाठ
	: ज्ञान मुकुल (प्रथम भाग)
	: नव मौखिक
	: प्राथमिक रचना
	: नव धारापात

ज्योतिप्रसाद लडिया (सं.) : ज्ञान मुकुल (द्वितीय भाग)

अनुवादक : धरणीधर गोस्वामी

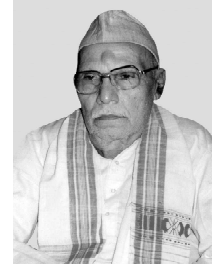
चित्रों का दीवार चार्ट : असमीया साहित्यर रत्न

नवीन पुस्तक भंडार में देश-प्रेम की झांकी : भगवती प्रसाद लाडियाजी पक्के देश-प्रेमिक थे। देश के मनीषी उनका आदर्श था। गणतंत्र दिवस, स्वतंत्रता दिवस और नेताजी सुभाष चंद्र बोस के जन्मदिन पर कनिष्ठ पुत्र घनश्याम लडिया द्वारा दुकान आने वाले ग्राहकों को 'जयहिंद' द्वारा स्वागत कराया जाता था। इस संबंध

में घनश्याम का उद्गार इस प्रकार है :

मुझे स्मरण है कि सुभाष चंद्र बोस का जन्मदिन, पंद्रह अगस्त और छब्बीस जनवरी के दिन मुझे खादी कपड़े पहनाकर एक मेज पर चढ़ाकर खड़े करके रखा जाता था और हमारे दुकान आने वाले सभी लोगों को सैल्यूट देकर 'जयहिंद' कहने के लिए कहा गया था और मैं भी ऐसा करता था, साथ ही सैल्यूट ठोंकता था।

निष्कर्ष : 'दादी के गोले' के बाद सन् 1950 ई. से अर्द्ध शताब्दी काल और इसके बाद भी कुछ वर्षों तक पुस्तक व्यवसाय के साथ जुड़ कर भगवती प्रसाद लडियाजी ने गोलाघाट के नवीन पुस्तक भंडार को कृतित्व के शिखर तक पहुंचाया था। असम और बाहर भी इसका यश व्याप्त हो गया था। संयोग से लडियाजी को सन् 1976 ई. में हिंदी सलाहकार समिति का सदस्य बनाया गया था और इसी वर्ष में दिल्ली में आयोजित अंतर्राष्ट्रीय पुस्तक मेला के लिए आमंत्रित भी किया गया था। यहां भारतवर्ष और विश्व के अगली पंक्ति के प्रकाशन समूह भाग लेते हैं। इस मेले में उपस्थित होकर लडियाजी को मिला था परम आनंद। ग्रंथ जगत की समस्या, प्रकाशन की समस्या, अनुवाद की आवश्यकता, ग्रंथों की मांग-बाजार आदि अनेक विषयों पर होने वाली परिचर्चाओं में लडियाजी ने भाग लिया था। यहीं पर वे हिंदी साहित्य के चोटी के साहित्यकार अज्ञेय, भगवती चरण वर्मा, चंद्रगुप्त विद्यालंकार जैसे अनेकों की निकटता पाकर, उनके अमूल्य भाषण सुनकर काफी उपकृत हुए थे। दिल्ली के सन् 1976 की अंतर्राष्ट्रीय मेला की भीनी-भीनी खुशबू को उन्होंने हृदय में संजोकर रखा था। पुस्तक व्यवसाय और प्रकाशन से जुड़े हुए अर्द्ध सदी के कृतित्व को सार्वजनिक रूप से स्वीकृति प्रदान हेतु सन् 1998 ई. में गुवाहाटी में आयोजित उत्तर-पूर्व ग्रंथ मेला में अखिल असम ग्रंथ प्रकाशन और विक्रेता संस्था द्वारा भगवती प्रसाद लडियाजी को भव्य रूप से सम्बद्धित किया गया था। वस्तुतः कहा जाएगा कि लडियाजी के सपने का साकार रूप 'नवीन पुस्तक भंडार' गोलाघाट के बौद्धिक इतिहास का एक स्वर्णिम पृष्ठ है, जिसमें कतई संदेह नहीं है।



पंचम अध्याय

समाज सेवा

सूचना : व्यक्ति का सम्मिलित सामाजिक रूप ही समाज है। इस समाज में व्यक्ति नितान्त अकेले रह सकता है या समाज के सामूहिक स्वार्थ-कल्याण में अपने को न्योछावर करके जीवन को सार्थक बना सकता है। प्रथम श्रेणी के लोग का हिसाब समाज नहीं लेता है, जीवितकाल में वैसा व्यक्ति अपने वृत्त के भीतर ही परिभ्रमण कर अपने जीवन को समाप्त करता है। समाज द्वितीय श्रेणी के लोग के प्रति आदर की भावना रखता है। अपने को समाज के लिए न्योछावर करने वाला ही वंदित होता है, स्मरणीय होता है। गोलाघाट के भगवती प्रसाद लडिया ने केवल चौदह वर्ष की आयु में जैसे एक महामानव- महात्मा गांधी का दर्शन करके अभिभूत हुआ था; अपने जीवन में भी गांधीजी के आदर्श को स्वीकार कर वे खादी पहना करते थे, राष्ट्रभाषा के प्रचार-प्रसार के कार्यकर्ता बने थे। गांधीजी के उपरांत अन्य अनेक मनीषियों के प्रति उनके मन में आदर की भावना थी। उनके छोटे बेटे श्री घनश्याम के कथनों के माध्यम से लडियाजी के आदर्श और विश्वास के बारे में जाना जा सकता है- "पिताजी को महान व्यक्तियों की जीवनियां बड़ी अच्छी लगती थीं। बचपन में ही मुझे उनके बारे में बताकर उनका आदर्श लेने के लिए कहा करते थे। इनमें मुख्य थे- महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, टिकेंद्रजीत, लाचित बरफुकन, मणिराम देवान, कुशल कोंवर, भगत सिंह, महात्मा गांधी, सुभाष चंद्र बोस, पुरुषोत्तमदास टंडन, हनुमान प्रसाद पोद्दार, बाबा राघवदास, काका कालिंकार, राम मनोहर लोहिया, लालबहादुर शास्त्री, डॉ. राजेंद्र प्रसाद, गोपीनाथ बरदलै, पीतांबर देव गोस्वामी, लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा, ज्योतिप्रसाद अगरवाला, कमलनारायण देव और हेमचंद्र गोस्वामी। मैं लिखने-पढ़ने के पहले ही इन मनीषियों के बारे में जानकर अभिभूत हो गया था।" अपने सीमित साधन एवं व्यवसाय के बीच में लडियाजी समाज के लिए एक अकुलाहट अनुभव करते थे और इसके लिए सदा तत्पर रहते थे। जैसे कुछ खंड-चित्रों के माध्यम से लडियाजी की समाज सेवा की झांकी देखी जा सकती है।

दुर्गतजनों की सहायता : द्वितीय महासमर के समय सन् 1942 ई. में जापान बर्मा (ब्रह्मदेश, म्यांमार) पर आक्रमण करता है, बम बरसाता है, असम सीमांत अशांत हो उठता है। स्वतंत्रता आंदोलन के समय विश्व युद्ध की भयावहता से असम और सीमांत अंचल प्रभावित हो जाता है। असम में व्यवसाय करने वाले कुछ व्यवसायी असम छोड़ कर अपने-अपने प्रदेशों में चले जाते हैं। एक स्वतंत्रता सेनानी के रूप में भगवती प्रसाद ने कभी असम छोड़ने की बात नहीं सोची।

इस युद्ध के कारण एक विभीषिकामय परिस्थिति उत्पन्न होती है। प्राण संकट के कारण बर्मा से अनेक लोग भाग कर कोहिमा होते हुए डिमापुर पहुंचते हैं। वहां इन बर्मी-शरणार्थियों को कठिन विपत्तियां झेलनी पड़ती हैं। इन बर्मी शरणार्थियों की सहायता के लिए अनेक संस्थाएं सामने आती हैं। इनमें कलकत्ते की **मारवाड़ी रिलीफ सोसाइटी** अन्यतम है। इस संस्था से शरणार्थियों की सहायता हेतु एक दल डिमापुर-लामडिंग आता है, जिसका नेतृत्व कर रहे थे पंडित भालचंद्र शर्माजी।

उस समय भगवतीजी बाईस वर्ष के युवक थे। वे पंडित ध्यानदास शर्मा के साथ सहायता दल में योगदान कर डिमापुर-लामडिंग जाते हैं। उस शरणार्थी शिविर के दृश्य अति करुण थे, मृत्यु-यंत्रणा असहनीय थी। इस हृदयविदारक दृश्य देखकर भगवतीजी टूट गए थे। उन्होंने यथासंभव शरणार्थियों की सेवा की। यह शिविर चार महीने तक चला था। सन् 1942 ई. के अप्रैल महीने में उस शिविर के निरीक्षण के लिए **पं. जवाहरलाल नेहरू** आए थे। नेहरूजी गोलाघाट आकर राजेंद्रनाथ बरुवा के घर में अतिथि के रूप में ठहरे थे। नेहरूजी गोलाघाट से डिमापुर पहुंचकर शरणार्थी शिविर का निरीक्षण कर शरणार्थियों के कष्ट लाघव हेतु कुछ सुझाव देते हैं। भगवती प्रसाद के साथ फटिक शर्मा, राम बरुवा, गंधराम गगै और ध्यानदास शर्मा थे। इन लोगों को कोहिमा होते हुए जापानी बमबाजी माहौल से गुजरते हुए कलेजे को हाथ पर लेकर लौटना पड़ा।

बयालीस (1942) के दुर्गतजनों के लिए भी भगवती प्रसाद वालंटियर को बाजार इलाके में मुष्टि-भिक्षा मांगना पड़ा। गोलाघाट के कुछ दुर्गत परिवारों को भी आर्थिक सहायता करनी पड़ी और विपत्ति के समय उनके पास जाकर ढाढ़स बंधाना पड़ा।

गोलाघाट हिंदी पुस्तकालय में लडियाजी की भूमिका : गोलाघाट में कुछ समाज सचेतन विद्यार्थियों- रत्नेश्वर तामुली, चिदानंद सड़किया, सदानंद चलिहा, देवीचरण गगै, राम गोस्वामी, हरिश्चंद्र गोस्वामी, गिरीन पटंगिया, बिमलानंद दुवरा,

कीर्तिनाथ हाजरिका, तुलसीनाथ बरगोहाई के प्रयास से सन् 1929 ई में यूनियन लाइब्रेरी की स्थापना होती है। गोलाघाट एमएस थिएटर हॉल के कोने के एक छोटे से कमरे में यह पुस्तकालय था। उस समय भगवती प्रसाद नौ वर्ष के बालक थे।

असम के शिक्षा मंत्रणालय के अवकाशप्राप्त उप-परिदर्शक तेजपुर के कुमुदेश्वर बरठाकुर के नेतृत्व में सन् 1936 ई. से अखिल असम पुस्तकालय संघ का कार्य प्रारंभ होता है। बरठाकुरजी ने पोलो फील्ड के पास अपने घर से इसका काम शुरू किया था। तब असम के प्रधानमंत्री गोपीनाथ बरदलैजी का संरक्षण मिला था।

अखिल असम पुस्तकालय संघ के चार वर्षों के बाद गोलाघाट में सन् 1940 ई. में भगवती प्रसाद लडियाजी के प्रोत्साहन से हिंदी पुस्तकालय का गठन हुआ। इसका कारण था स्वतंत्रता आंदोलन से संबंधित अधिकतर समाचार पत्र-पत्रिकाओं में हिंदी में लिखा रहता था, तिस पर भी महात्मा गांधी ने राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार में महत्व दिया था। गोलाघाट में हिंदी प्रचार हेतु आने वाले ध्यानदास शर्मा तथा वैकुण्ठनाथ सिंह के साथ भी भगवती प्रसाद की निकटता बढ़ी थी। बीस वर्ष के युवा भगवती प्रसाद का यह था **ज्ञान-यात्रा** के लिए बढ़ाया गया एक सफल कदम। इसमें उन्हें सहायता मिली थी राजेंद्र नाथ बरुवा, हरिश गोस्वामी, सुरेंद्र नाथ सड़किया, गजानन जालान, खगेश्वर तामुली आदि से। स्थानाभाव के कारण कांग्रेस ऑफिस के एक कोने में पुस्तकालय स्थापित किया गया। इसमें असमिया, हिंदी, बांग्ला, अंग्रेजी के पुस्तकों का संग्रह किया गया। नामकरण किया जाता है- **गोलाघाट हिंदी पुस्तकालय**; मोलान चंद्र बरा पुस्तक निरीक्षक बने।

सन् 1941 ई. के 14 जून को पुस्तकालय का द्वितीय वार्षिक अधिवेशन शुरू हुआ और एक नई कार्यकारणी गठन की गई, जो इस प्रकार थी :

अध्यक्ष	: गजानन जालान
उपाध्यक्ष	: प्रियनाथ देव, बी.एल.
मंत्री	: भगवती प्रसाद लडिया
सहायक मंत्री	: रामदास रविदास सूर्यकांत गोहाई
पुस्तक निरीक्षक	: कामाख्या प्रसाद साहु
हिसाब परीक्षक	: सूरजमल दांतरवाला

उस समय तक पुस्तकों की संख्या 350 और सदस्यों की संख्या 60 हो गई थी। सन् 1942 की जनवरी को ढाई रुपए किराए पर देवेश्वर राजखोवा से कोऑपरेटिव

बैंक का एक कमरा लिया गया था। वहां एक वर्ष तक पुस्तकालय चला। उस समय गोविंदलाल विण्णानी तथा नवरंगराम बजाज से काफी सहायता मिली थी।

सन् 1942 ई. के 7 मार्च को टी. प्लेंटर देवराज राय की अध्यक्षता में इसका वार्षिक अधिवेशन संपन्न होता है। इसमें हजारों की संख्या में स्त्री-पुरुष एकत्रित हुए थे। स्वागताध्यक्ष गजानन जालान ने स्वागत भाषण में पुस्तकालय की आवश्यकता पर जोर देते हुए इसके लिए निजी भवन का प्रयोजन बताया था। उन्होंने सभी से इसके लिए आग्रह किया। अध्यक्षीय भाषण में देवराज राय ने कहा कि अगर एक सुंदर जगह मिल जाए तो वे भवन बनवा देंगे। उस दिन असमिया बालकों द्वारा 'बनवीर' नाटक खेला गया, जो कार्यक्रम का मुख्य आकर्षण का केंद्र बना।

द्वितीय महासमर के कारण पुस्तकालय का कार्य बंद हो गया। अगस्त आंदोलन में कितने ही कार्यकर्ता गिरफ्तार कर लिए गए। लगभग तीन वर्षों तक पुस्तकालय बंद रहा, परंतु रामदास रविदास के कारण पुस्तकें सुरक्षित रहीं।

सदस्यों के लौटने के बाद दुगुने उत्साह से पुस्तकालय का कार्य पुनः प्रारंभ हुआ। समय-समय पर विद्वानों से भाषण सुनने के लिए संस्था की ओर से व्यवस्था की गई। इसी बीच गीताप्रेस, गोरखपुर के 'कल्याण' के संपादक श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार का स्वागत श्री राधानाथ गोस्वामी बी.एल की अध्यक्षता में किया गया। श्री पोद्दारजी ने भारतीय संस्कृति पर सारगर्भित अपना भाषण दिया था।

पुस्तकालय का काम सुचारू ढंग से संचालन करने हेतु सन् 1946 ई. के 18 मई को श्रीमती रासेश्वरी खाटनियार की अध्यक्षता में पुस्तकालय के लिए एक नवीन समिति गठित की गई। एक विस्तृत नियमावली तैयार की गई और मासिक 10 रुपए किराए पर रामदास रविदास से एक कमरा किराए पर लिया गया, उन्हें ही पुस्तक-निरीक्षक का दायित्व सौंपा गया।

सन् 1947 ई. के 26 जनवरी को स्थानीय एमेसर नाट्य मंदिर में दरंग कॉलेज के अध्यक्ष श्री कामाख्या प्रसाद त्रिपाठी एम.ए.; बी.एल. की अध्यक्षता में समारोहपूर्वक पुस्तकालय वार्षिकोत्सव मनाया गया। नाट्य मंदिर सभी श्रेणियों के व्यक्तियों से ठसाठस भरा हुआ था। समारोह कार्यवाही वंदे मातरम् गायन से प्रारंभ हुई और बालिकाओं ने स्वागत गीत गाया।

स्वागताध्यक्ष श्री गिरीश चंद्र बरुवा ने अतिथियों का स्वागत किया। अपने भाषण में उन्होंने कहा कि राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रचार से देश में हिंदू-मुस्लिमों में प्रेम भाव बढ़ेगा। अतः समस्त असमिया बंधुओं को राष्ट्रभाषा का अध्ययन करना चाहिए।

स्वागत-मंत्री श्री जयदेव खंडेलवाल ने विधान परिषद के सदस्य श्री प्रभु दयाल हिम्मतसिंका, श्री राधाकृष्ण खेमका, श्री बजरंग लाल लाठ, श्री वंशगोपाल बाजपेयी, श्री महावीर प्रसाद देवड़ा, श्री शंकर लाल भातरा आदि प्रमुख व्यक्तियों के संदेश पढ़कर सुनाए। उसके पश्चात 'महात्मा' नामक नाटक का एक दृश्य हिंदी स्कूल के छात्रों ने प्रस्तुत किया, जिसमें नौकरशाही के कारनामों एवं देश पर बलिदान होने की भावनाओं का दिग्दर्शन कराया गया था।

इस अवसर पर पं. भूरूलाल शर्मा, श्रीमती रासेश्वरी खाटनियार, श्री मोलान चंद्र बरा आदि सज्जनों ने पुस्तकालय की महत्ता और राष्ट्रभाषा के संबंध में भाषण दिया था। असमिया बालिका मोमिना बेगम ने एक गीत गाकर दर्शकों को मुग्ध किया। रमेशचंद्र जालान को अच्छा अभिनय करने पर पुरस्कृत किया गया था।

अपने अध्यक्षीय भाषण में श्री कामाख्या प्रसाद त्रिपाठी ने कहा कि अंग्रेजी बोलने के स्नेह को, जिसने मस्तिष्क को गुलाम बना रखा, उसे छोड़ देने का समय आ गया है। हमने इस भाषा को बारह वर्षों तक मंथन किया है तब भी शुद्ध रूप से बोल नहीं सकते हैं और हमारी यूरोपियन मजाक उड़ाते हैं। इसलिए अपने देश की राष्ट्रभाषा हिंदी सीखने का सबको अपना उद्देश्य बना लेना चाहिए। असमिया से हिंदी भाषा की तुलना करते हुए उन्होंने कहा कि पचहत्तर प्रतिशत शब्द आपस में मिलते-जुलते हैं। अंत में उन्होंने पुस्तकालयों की उन्नति करने पर विशेष जोर दिया था।

असमिया जातीय संगीत 'ओ मोर आपोनार देश' गाने के साथ उत्सव की कार्यवाही समाप्त हुई। इस उत्सव को सफल बनाने में श्री जयदेव खंडेलवाल, श्री मदन लाल खेतान, श्री सोहनलाल अग्रवाल आदि का प्रशंसनीय सहयोग रहा। विशेषतः श्री सुरेंद्रनाथ सड़किया, श्री के. मेकफारलिंग और श्री हरीश चंद्र गोस्वामी के द्वारा गायन एवं नाटक प्रस्तुतिकरण सफल रहा।

सन् 1941 ई. में जब लोकप्रिय गोपीनाथ बरदलै और काका कालेलकर गोलाघाट आए थे तब भगवती प्रसाद लडियाजी ने उन्हें हिंदी पुस्तकालय दिखाकर प्रशंसा प्राप्त की थी। इसी तरह सन् 1950 ई. के जुलाई महीने में जब असम के गवर्नर एवं जवाहरलाल नेहरू के सहपाठी श्रीप्रकाश गोलाघाट आए थे, तब उन्हें भी पुस्तकालय दिखाया गया था। गोलाघाट जैसे एक छोटे से नगर में एक हिंदी पुस्तकालय स्थापना करते देख उन्होंने संतोष व्यक्त किया। पुस्तकालय के कार्य-विवरण से पता चलता है कि समय-समय पर विशिष्ट व्यक्तियों ने आकर पुस्तकालय

का अवलोकन किया था और कुछ सम्मतियां लिखी थीं, पर संरक्षण के अभाव में सभी सम्मतियां अप्राप्य हैं। कुछ विशिष्ट दर्शनार्थियों के नाम इस प्रकार हैं-

1. आचार्य काका कालेलकर, वर्धा
2. असम के प्रधानमंत्री गोपीनाथ बरदलै
3. विधान परिषद के सदस्य प्रभुदयाल हिम्मतसिंका
4. राज्यपाल श्रीप्रकाश, असम
5. समाजवादी नेता हरेश्वर गोस्वामी
6. गोरखपुर, गीताप्रेस से प्रकाशित 'कल्याण' के संपादक हनुमान प्रसाद पोद्दार
7. समाजसेवी भंवरमल सिंधि (साहित्य रत्न)
8. कामाख्या प्रसाद त्रिपाठी, अध्यक्ष, दरंग कॉलेज
9. समाजसेवक राधाकृष्ण खेमका, तिनसुकिया
10. पं. शिवसिंहासन मिश्र
11. अमृतलाल नानावटी, वर्धा

कुछ सम्मतियां

□ **आचार्य काका कालेलकर, वर्धा** : यह खुशी की बात है कि असम प्रांत में स्थान-स्थान पर हिंदी पुस्तकालय दिखाई पड़ रहे हैं। गोलाघाट के हिंदी प्रेमियों को अभिनंदन करना चाहिए कि यहां पर भी यही उत्साह प्रगट हुआ है। पुस्तकालय में शुद्ध साहित्य ही रखा जाए, इसका आग्रह रहना चाहिए।

□ **अमृतलाल नानावटी, वर्धा** : आज गोलाघाट हिंदी पुस्तकालय देखा। यह जानकार बड़ा हर्ष हुआ कि पुस्तकालय के सदस्य सब धर्म के हैं। यह अच्छी प्रगति कर रहा है। मैं आशा करता हूँ कि गोलाघाट में यह पुस्तकालय राष्ट्रभाषा का एक अच्छा पुस्तकालय बनेगा।

□ **भंवरमल सिंधि (साहित्य रत्न), कलकत्ता** : गोलाघाट जैसे छोटे स्थान में यह पुस्तकालय देख कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। पुस्तकालय राष्ट्र निर्माणकारी संस्थाओं में मुख्य होते हैं। मुझे आशा है कि पुस्तकालय के कार्यकर्ता पाठकों की रुचि के साथ पुस्तकों के चुनाव में जीवन निर्माण की दृष्टि को विशेष ध्यान में रखेंगे। मैं पुस्तकालय की सतत उन्नति कामना चाहता हूँ।

□ **कमलनारायण देव, संचालक, असम राष्ट्रभाषा समिति** : मुझे बेहतर खुशी हुई कि जैसे और जगहों में कुछ पुस्तकालय मैंने देखे हैं, जो किसी खास

समुदाय या फिरके के लिए खोले गए हैं, उनसे इस पुस्तकालय का ध्येय कहीं ज्यादा उदार एवं व्यापक है। पुस्तकालय की बुनियाद खड़ी करने वाली उत्साही बंधुओं को मैं हार्दिक धन्यवाद ज्ञापन करता हूँ। अपने उदार दृष्टिकोण के कारण पुस्तकालय दीर्घायु होगा और राष्ट्र चेतना का वाहक बनेगा, मुझे यही आशा है।

□ **हनुमान प्रसाद पोद्दार, संपादक, कल्याण, गोरखपुर** : गोलाघाट जैसे स्थान में हिंदी के पुस्तकालय को देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई। इससे राष्ट्रभाषा के प्रचार में विशेष सहायता मिलेगी। राष्ट्रभाषा प्रेमी गोलाघाट निवासियों के इस कार्य में विशेष रूप से सहायता करनी चाहिए। पुस्तकालय में पुस्तकों का संग्रह करते समय ध्यान रखना चाहिए, जिससे चरित्र नाशक साहित्य पुस्तकालय में न आने पाए। इसके संचालक बधाई के पात्र हैं।

□ **कामाख्या प्रसाद त्रिपाठी, अध्यक्ष, दरंग कॉलेज, तेजपुर** : मैंने आज पुस्तकालय का निरीक्षण किया। देखकर हर्ष हुआ। कार्यकर्ता जीती-जागती दिलचस्पी ले रहे हैं। संस्थापक श्री भगवती प्रसाद लडिया अपना समय देते हैं और उसके लिए दिमाग लगाते हैं। उनकी और अन्यान्य कार्यकर्ताओं की तत्परता सराहनीय है। इस पुस्तकालय का एक खास उद्देश्य नया पाठक बनाना होना चाहिए। आशा है इसके प्रति प्रबंधकर्ता ध्यान देंगे।

□ **हरेश्वर गोस्वामी, बार, एट लॉ, गुवाहाटी** : Very much pleased to see the Library. The Library needs encouragement from every section of the people. Time demands political education. People should read political literature more than the ordinary novels. I wish the library all success.

□ **विश्वनाथ प्रसाद गुप्ता, संचालक, 'अकेला', तिनसुकिया** : मुझे यह देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि प्रबंधकारिणी समिति में हरिजन भाई भी शामिल हैं। मुख्यतः मैं यहां के उत्साही कार्यकर्ता श्री भगवती प्रसाद लडिया को धन्यवाद देता हूँ कि जिसने अपनी तमाम कठिनाइयों का सामना करते हुए पुस्तकालय को बराबर कायम रखा है। आशा है इसी प्रकार हमारे अन्य नवयुवक भाईगण भी अपना कर्तव्य पालन करेंगे।

□ **वैकुण्ठनाथ सिंह (संस्थापक पुस्तकालय), शिलांग** : यह जान मुझे अत्यंत ही प्रसन्नता हुई कि पुस्तकालय ने एक आदर्श संस्था का रूप धारण कर लिया है। गांधी गीता भवन नामकरण भी बड़ी बुद्धिमत्ता से किया गया है। उद्देश्यों में से एक महान उद्देश्य भारतीय संस्कृति का प्रचार रखा गया है। यह कार्य अत्यंत

ही महान और आवश्यकीय है। मैं इस संस्था के नाम और उद्देश्यों से पूर्ण सहमत हूँ। भगवान से प्रार्थना है कि कार्य को अग्रसर करने में नवयुवक कार्यकर्ताओं के सहायक हों। मेरा हृदय आप सबों के साथ है।

पुस्तकालय का एक निजी भवन न होना सब सदस्यों को खल रहा था। जब **बाबू नेमीचंद्र पटवारी** गोलाघाट आए, तब पुस्तकालय के अध्यक्ष गजानन जालान, मंत्री भगवती प्रसाद लडिया, रामधनीराम कानू, रामदास रविदास, सूरजमल अग्रवाल, गंगाधर अग्रवाल, गजानंद गोयनका आदि ने उनसे मिलकर पुस्तकालय के लिए जमीन देने की प्रार्थना की। इस पर उन्होंने अपनी जमीन का एक टुकड़ा 22 जुलाई, 1946 को पुस्तकालय को प्रदान कर उसकी रजिस्ट्री करवा दी। सन् 1942 के अगस्त आंदोलन के समय गोलाघाट में सरकार ने दस हजार रुपए सामूहिक जुर्माना किया था। आवेदन करने पर उसके पांच सौ रुपए मिले, जिससे ईंट खरीदी गई।

सन् 1948 ई. के 7 नवंबर की साधारण सभा में पुस्तकालय के विकास एवं उन्नति को ध्यान में रखते हुए इस संस्था का पूर्व नाम बदलकर 'गांधी गीता भवन' को एक आदर्श केंद्रीय संस्था का रूप दिया गया। पुस्तकालय के लिए प्राप्त जमीन पर ध्यानदास शर्मा का प्राथमिक हिंदी विद्यालय को स्थाई रूप से निर्मित किया गया। परवर्ती समय में अर्थात् सन् 1966 ई. में इसी विद्यालय के एक कमरे में हिंदी पुस्तकालय को स्थानांतरित किया गया। स्मरण हो कि इस पुस्तकालय को रामदास रविदास के घर से सन् 1950 ई. को नवीन पुस्तक भंडार में, तत्पश्चात् सन् 1953 ई. में भगवती प्रसाद लडियाजी के अहाते में निर्मित शिव मंदिर से संलग्न एक कमरे में इसे स्थानांतरित किया गया था।

□ पुस्तकालय के प्रति भगवती प्रसाद लडियाजी का एक विशेष आकर्षण था। जब सन् 1942 ई. के सरुपथार रेल-दुर्घटना के समय वे भूमिगत होकर अपने पैतृक गांव मंडावा में थे तब वहां के पुस्तकालय 'युवक-सभा' का मंत्री बनते हैं और स्वतंत्रता संग्राम का कार्यक्रम भी जारी रखते हैं।

□ सन् 1989 ई. भगवती प्रसादजी अस्वस्थ होने पर इलाज के लिए डिब्रूगढ़ आते हैं। डिब्रूगढ़ के मारवाड़ी आरोग्य भवन में रहते समय वहां पुस्तकालय बनाने के लिए दो कार्टून पुस्तकें भेंट करते हैं।

□ भगवती प्रसाद लडियाजी ने अपने आवास पर एक निजी पुस्तकालय बनाया था, जहां अनेक मूल्यवान ग्रंथों, पत्र-पत्रिकाओं को संग्रहित किया गया था। उस पुस्तकालय को कमरबंधा कनिष्ठ महाविद्यालय को दान किया गया है।

ध्यातव्य है कि असम में पुस्तकालय आंदोलन चलाने वाले अन्यतम उद्योगी गोलाघाट के गांधीवादी विचारधारा के **अयोध्या प्रसाद गोस्वामीजी** भगवती प्रसाद लडियाजी के परम मित्र थे। उनके साथ भगवती प्रसादजी पुस्तकालय आंदोलन से जुड़ जाते हैं। इस संबंध में गोस्वामीजी के एक लेख में ऐसा जिक्र आता है— "जोरहाट के रामेश्वर बरुवाजी (प्रधान शिक्षक) को अध्यक्ष के रूप में लेकर इस संघ के मंत्री के रूप में कुमुदेश्वर बरठाकुर कार्य निर्वाह करते हैं। सन् 1952 ई. तक गांव-गांव घूमकर एक जागृति लाने का प्रयास करते हैं। डिब्रूगढ़ के टंकेश्वर चुतीया, महेश्वर चुतीया; जोरहाट बरभेटा के देबेन बरा; गोलाघाट के पूर्णचंद्र गोस्वामी, भगवती प्रसाद लडिया, अयोध्या प्रसाद गोस्वामी; बोकाखात के भवेश सइकिया, कमरबंधा के जीवन सइकिया, नगांव पुरानी गोदाम के गोलोक चंद्र शर्मा, चारु गोस्वामी; कलियाबर के पूबसरिया के देबेंद्रनाथ महंत; सदानंद महंत, गुवाहाटी के गजेन फुकन, महेश्वर नेओग; उत्तर लखीमपुर के धर्मेश्वर कटकी, उत्तर गुवाहाटी के दुर्गेश्वर शर्मा उनके सहयोगी थे।"

('असमर पुथिभरौल आंदोलन : एटि खतियान' शीर्षक निबंध)

संस्थाओं के प्रति लडियाजी का सहयोग : भगवती प्रसाद लडियाजी स्वयं उच्च शिक्षित व्यक्ति नहीं होने पर भी विद्योत्साही थे। शिक्षा-दीक्षा के संदर्भ में वे हमेशा सामाजिक कार्यों में अग्रणी भूमिका लेते थे। वैसी दो उच्च शिक्षा की संस्थाएं हैं— गौहाटी विश्वविद्यालय और गोलाघाट कॉलेज। तदुपरांत हिंदी विश्व सम्मेलन एवं गोलाघाट में आयोजित असम साहित्य सभा के अधिवेशन में भी हाथ बंटाए थे।

(क) **गौहाटी विश्वविद्यालय :** असम का उच्च शिक्षा प्रतिष्ठान गौहाटी विश्वविद्यालय असम के सभी के सपने और आदर का साकार रूप है। असम की जनता के त्याग, श्रम से निर्मित गौहाटी विश्वविद्यालय लौहित्य के दोनों किनारों में ज्ञान-विज्ञान बिखरते हुए विश्व सभा में भी मान बढ़ाने में समर्थ है।

सन् 1901 ई. में गुवाहाटी में स्थापित कॉटन कॉलेज के समय भारतवर्ष में कुल चार विश्वविद्यालय थे— कलकत्ता, मद्रास, बंबई, और इलाहाबाद। सन् 1913 ई. से सन् 1921 ई. तक भारत में और छह विश्वविद्यालय स्थापित होते हैं। गौहाटी विश्वविद्यालय स्थापना की मांग सन् 1917 ई. में असम विधान परिषद में उठी थी। पुनः सन् 1931 ई. में विधान परिषद में इसे दोहराई गई थी। सन् 1935 ई. के 17 मार्च को असम व्यवस्था परिषद के अधिवेशन में असम विश्वविद्यालय संबंधी एक

प्रस्ताव दाखिल किया जाता है। इसके जवाब में शिक्षा मंत्री ने सरकार का अर्थाभाव बताया। सन् 1944 ई. में 1 अक्टूबर रविवार को दोपहर डेढ़ बजे शिवसागर के कालीप्रसाद मेमोरियल हॉल में रायबहादुर वेणुधर राजखोवा की अध्यक्षता में गौहाटी विश्वविद्यालय के प्रचार विभाग के आह्वान पर सार्वजनिक सभा आयोजित हुई। इसमें असम साहित्य सभा के नव-निर्वाचित साहित्य सभा के अध्यक्ष वाग्मीकवि नीलमणि फुकनजी भी उपस्थित थे। माधव चंद्र बेजबरुवा ने सभा की उद्देश्य-व्यख्या करने के उपरांत कई प्रस्ताव पारित किए गए और एक सात सदस्यों का ट्रस्ट गठन किया गया, जो इस प्रकार है- (1) मान्यवर श्रीमान् गोपीनाथ बरदलै (अध्यक्ष), (2) मान्यवर श्रीमान् शरत चंद्र गोस्वामी (मंत्री), (3) मान्यवर श्रीमान् सर सैयद मोहम्मद सादुल्ला, (4) मान्यवर खान बहादुर सैयदुर रहमान, (5) मान्यवर श्रीमान् कृष्णकांत संदिकै (6) मान्यवर श्रीमान् हेरम्ब प्रसाद बरुवा एवं (7) मान्यवर श्रीमान् शैलेंद्र प्रसाद बरुवा।

असम के निवासियों ने सन् 1935 ई. में 22 मई की तारीख को 'विश्वविद्यालय दिन' के रूप में पालन किया, गोलाघाट ने भी इसमें सहयोग दिया। द्वितीय महासमर के उपरांत ट्रस्ट बोर्ड ने कोष संग्रह का कार्य प्रारंभ किया। लोकप्रिय गोपीनाथ बरदलै के नेतृत्व में ट्रस्ट बोर्ड के सदस्यों ने असम के भिन्न-भिन्न स्थानों में जाकर कोष संग्रह किया। इस दल में गोलाघाट के महेश्वर बरुवा भी थे।

विश्वविद्यालय के कोष संग्रह समिति में स्वतंत्रता संग्रामी देशप्रेमियों के शामिल होने पर भगवती प्रसादजी फूला न समाए थे। गोलाघाट में कोष संग्रह करने के लिए आने वाले दल में थे- लोकप्रिय गोपीनाथ बरदलै, सचिव फकरुद्दीन अली अहमद, प्रभुदयाल हिम्मतसिंका, महेश्वर नेओग आदि। उन्होंने आकर गोलाघाट के गजानन जालानजी के घर में डेरा डाला था और वहीं से निधि संग्रह का अभियान चलाया था। भगवती प्रसाद लडिया ने भी अपने अनुसार इसमें सहयोग किया था।

(ख) गोलाघाट कॉलेज (देवराज राय कॉलेज) : सन् 1948 ई. में गोलाघाट में एक महाविद्यालय स्थापना करने के लिए स्वतंत्रता संग्रामी शंकर चंद्र बरुवा, गोलाप चंद्र गोस्वामी, अयोध्या प्रसाद गोस्वामी, प्रमोदाभिराम दास, हेरम्ब प्रसाद बरुवा, गिरीश चंद्र बरुवा आदि ने प्रयास चलाया था। इससे गोलाघाट निवासी विशेषतः शिक्षानुरागीण काफी उत्साहित हुए। सन् 1949 ई. के 1 सितंबर में महाविद्यालय का शुभारंभ स्थानीय बेजबरुवा हाई स्कूल में पठन-पाठन से प्रारंभ होता है। हेरम्ब प्रसाद बरुवा (अध्यक्ष), राधानाथ गोस्वामी, यदुनाथ सड़किया,

फिरदुस अली अहमद, दुलाल शर्मा, प्रीतिलता गोस्वामी आदि अध्यापकों ने पठन-पाठन कार्य को आगे बढ़ाया और एक दल ने घर-घर जाकर निधि संग्रह किया। भगवती प्रसाद लडिया ने भी निधि संग्रह कार्य द्वारा अपना योगदान दिया।

सन् 1950 ई. के अगस्त महीने की 10 तारीख को नव-प्रतिष्ठित कॉलेज में काम करने के लिए असम के बाहर से पंडित सत्यनारायण शास्त्री नामक एक व्यक्ति आए। शास्त्रीजी मूलतः आंध्र प्रदेश के थे, पर आए थे काशी से। वे शाकाहारी थे। इसलिए डॉ. प्रमोदाभिराम दास ने उन्हें भगवती प्रसादजी के घर में रहने की व्यवस्था कर दी। वे कुछ दिनों तक लडियाजी के घर में रहकर एक साथ खाते-पीते थे। गोलाघाट कॉलेज स्थापना में अग्रणी भूमिका अदा करने वाले यदुनाथ सड़किया के साथ भी भगवती प्रसाद की पुरानी दोस्ती थी।

सन् 1951 ई. में बगीढला चाय बागान के मालिक सुरेंद्र रायजी से एक लाख रुपए का दान स्वीकार कर उनके पितृ के नाम से कॉलेज का नामकरण किया गया- 'देवराज राय कॉलेज'।

गोलाघाट कॉलेज की प्रतिष्ठा के कार्यों में सहयोग प्रदान करने हेतु कॉलेज के पुस्तकालय के लिए सारी पुस्तकें सद्य प्रतिष्ठित नवीन पुस्तक भंडार से खरीदने का प्रस्ताव लिया गया। गोलाघाट कॉलेज के शिक्षकों के लिए लडिया जी की पुस्तक दुकान बौद्धिक मेल-मिलाप का केंद्र बना।

(ग) प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन, नागपुर : राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा ने पहली बार विश्व हिंदी सम्मेलन का आयोजन सन् 1975 ई. के जनवरी महीने में नागपुर में किया था। इसके लिए वर्धा से मधुकर राव चौधुरी के नेतृत्व में एक दल असम में कोष संग्रह के लिए आया था। राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा का प्रादेशिक कार्यालय शिलांग में होने के बावजूद यह दल गोलाघाट लडियाजी के पास पहुंचा। इससे पता चलता है कि लडियाजी पर बाहर के लोगों का भी कितना भरोसा था।

(घ) गोलाघाट साहित्य सभा : भगवती प्रसाद लडिया असम साहित्य सभा के आजीवन सदस्य थे। वे स्वयं साहित्य-संस्कृति के अनुरागी थे और असमिया साहित्य का अध्ययन करते थे। असम साहित्य सभा द्वारा स्वीकृत गोलाघाट साहित्य सभा एक पुरानी संस्था है। इसके आह्वान पर पहली बार सन् 1929 ई. में 'ज्ञानमालिनी' के कवि मफिजुद्दीन अहमद हाजरिका की अध्यक्षता में गोलाघाट में साहित्य सभा का वार्षिक अधिवेशन हुआ था। इसके करीब अर्द्ध-शती के उपरांत सन् 1978 में

विद्रोही कवि प्रसन्नलाल चौधुरी की अध्यक्षता में साहित्य सभा अधिवेशन संपन्न हुआ। इस अधिवेशन को सफल बनाने में लडियाजी ने कोष-संग्रह में सहायता की, तदुपरांत नंद तालुकदार कृत 'प्रसन्नलाल' एवं डॉ. हेम बरुवा रचित 'गोलाघाट इतिकथा' प्रकाशित कर असमिया भाषा-साहित्य के प्रति अपना अनुराग दर्शाया।

हिंदी विद्यापीठ की स्थापना : सन् 1970 ई. में भगवती प्रसाद लडियाजी ने हिंदी विद्यापीठ की स्थापना की। प्रबंध समिति के अध्यक्ष थे अनंत प्रसाद श्रीवास्तव और मंत्री थे जीवन राजखोवा। वर्धा समिति की परीक्षाओं के लिए इस विद्यापीठ में पढ़ाया जाता था। आदर्श हिंदी विद्यालय में इसका पाठदान संचालित होता था।

छात्र-सम्मेलन से लडियाजी का संबंध : सन् 1915 ई. में आसाम एसोसिएशन के चतुर्थ डिब्रूगढ़ अधिवेशन में अध्यक्षता की थी कर्मवीर नवीन चंद्र बरदलैजी ने। उनके अध्यक्षीय तेजोदीप्त भाषण से प्रभावित होकर **असम छात्र सम्मेलन** का जन्म हुआ। कलकत्ता ए.एस. क्लब, कॉटन कॉलेज ए.एस. क्लब और एकता सभा के समन्वित रूप ही है **असम छात्र सम्मेलन**। सन् 1916 ई. के दिसंबर में गुवाहाटी के लताशिल खेल मैदान में आयोजित इसके प्रथम अधिवेशन की अध्यक्षता की थी साहित्यरथी लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा ने। सन् 1930 ई. में गोलाघाट में इसका राज्यिक अधिवेशन संपन्न हुआ था। उस समय इस संस्था के महामंत्री थे मोहन चंद्र महंत। उस समय से ही दस वर्षीय किशोर भगवती प्रसाद से उनकी आत्मीयता होती है और यह संपर्क आजीवन चलता है। ध्यातव्य है कि मोहन चंद्र महंत कुछ दिनों तक चंद्रकुमार अगरवालाजी के 'सादिनीया असमीया' के संपादक थे। तब भी महंतजी से लडियाजी ने अपना संपर्क बनाए रखा। महंतजी के उपरांत गोलाघाट के काकडोडा में जन्म लेने वाले रमाकांत बरुवा का पुत्र हरेंद्र नाथ बरुवा संपादक होते हैं। गोलाघाट आने पर मोहन चंद्र महंत और हरेंद्र नाथ बरुवा दोनों लडियाजी से मिलते और देश की राजनीतिक हालत पर चर्चा करते। सन् 1945 ई. में प्रकाशित हरेंद्र नाथ बरुवा लिखित 'असम समस्या आरु भविष्यत' पुस्तक को लडियाजी ने पढ़कर संरक्षित रखा था।

मारवाड़ी युवा सम्मेलन में लडियाजी की भूमिका : भगवती प्रसाद लडिया ने युवावस्था में मारवाड़ी युवा संगठन से संबंधित कार्यों में भाग लिया था। लडियाजी श्रीमंत शंकरदेवजी के आदर्श से प्रेरित होने के कारण विभिन्न सुधारमूलक कार्यों में अगुवा बने। लडियाजी चाहते थे कि असम में निवास करने वाले मारवाड़ी भी

श्रीमंत शंकरदेव के आदर्श को अपना कर असमीया समाज में घुल-मिल जाए।

सन् 1948 ई. के 30 जनवरी को राष्ट्रपिता गांधीजी ने देश की कौमी एकता के लिए प्राण की आहुति चढ़ा दी। इसके बाद कलकत्ता से एक मारवाड़ी समाजसेवी श्री भूरूलाल शर्माजी गोलाघाट आए और लडियाजी, गजानन जालान जैसे प्रमुख मारवाड़ी बंधुओं को एकत्रित करके प्रांतीय मारवाड़ी सम्मेलन आयोजित करने के निमित्त आग्रह किए।

सन् 1948 ई. के अप्रैल महीने में पश्चिम बंगाल विधानसभा के अध्यक्ष माननीय श्री ईश्वरदास जालान की अध्यक्षता में गोलाघाट में मारवाड़ी सम्मेलन का तीसरा अधिवेशन संपन्न हुआ। इसके पूर्व सामाजिक क्रांति के अग्रदूत श्री वसंत लाल मुरारका की अध्यक्षता में नगांव में अधिवेशन हुआ था, जिसका उद्घाटन किया था असम व्यवस्था परिषद के पूर्व अध्यक्ष एवं प्रसिद्ध चाय उद्योगपति हेरम्ब प्रसाद बरुवाजी ने। स्वागताध्यक्ष थे गजानन जालान, स्वागत मंत्री श्री जयदेव खंडेलवाल, प्रचार मंत्री श्री भूरूलाल शर्मा थे।

गोलाघाट में संपन्न तृतीय अधिवेशन के साथ मारवाड़ी युवकों का भी सम्मेलन हुआ, इसके स्वागताध्यक्ष थे भगवती प्रसाद लडियाजी तथा स्वागत मंत्री मदनलाल खेतान थे। सम्मेलन में अध्यक्षता की थी क्रांतिकारी विचारधारा के तिनसुकिया के मारवाड़ी युवा राधाकृष्ण खेमकाजी (1917-1977) ने। समारोह का उद्घाटन किया था समाजवादी नेता हरेश्वर गोस्वामीजी ने।

गोलाघाट में आयोजित यह सम्मेलन ऐतिहासिक था, क्योंकि इसमें समाज में तहलका मचाने वाले कई युगांतकारी प्रस्ताव पारित किए गए थे। प्रस्तावों में प्रमुख थे- पर्दा प्रथा का उन्मूलन, दहेज का बहिष्कार, स्त्री शिक्षा पर जोर, मृतक विरादरी बंद, निरामिष छात्रावासों की स्थापना, प्रांतीय एकता, राजनैतिक चेतना का संचार इत्यादि। सभा के प्रस्ताव पारित कर वे बैठ नहीं गए, बल्कि गजानन जालान, राधाकृष्ण खेमका आदि पदाधिकारियों ने सुदूर पूर्व सीमांत सदिया तक पंद्रह दिनों का दौरा किया। वस्तुतः राधाकृष्ण खेमकाजी प्रगतिशील विचारधारा के थे, इसलिए वे पुराने संस्कारों का परिवर्तन चाहते थे। स्वयं खेमकाजी ने सन् 1949 ई. में बिलासपुर (मध्य प्रदेश) की विधवा कन्या कस्तूरी देवी से विवाह कर समाज के सामने एक आदर्श स्थापित किया।

विभिन्न सामाजिक कार्यों में लडियाजी : कैशोर अवस्था से भगवती प्रसाद लडियाजी सामाजिक कार्यों में अगुवा थे। सामाजिक जीवन उनके व्यक्तित्व

का एक अंग बन गया था। निष्ठा और ईमानदारी के कारण उन्हें हर आयोजन में सभी लोग उपस्थिति चाहते थे, अगर संभव न होता तो सुझाव अवश्य लेते। नब्बे के दशक में खुमटाई चाय बागान में उनके प्रयास से 'आंचलिक हिंदू संस्कार सम्मेलन' का आयोजन। जब लडियाजी किसी सामाजिक कार्य का दायित्व लेते थे तो उसे निष्ठापूर्वक पालन करते थे। इनमें से कुछ के उल्लेख किए जा सकते हैं, यथा- गोलाघाट हिंदी हाईस्कूल की प्रबंध समिति, उसी विद्यालय की प्राथमिक शाखा के कई वर्षों तक मंत्री, गजानन जालान सेवा सदन के अन्यतम ट्रस्टी, गोलाघाट शिव मंदिर न्यास समिति के अन्यतम न्यासी, गोलाघाट साहित्य सभा के आजीवन सदस्य, गोलाघाट बिहू सम्मेलन के अन्यतम संरक्षक इत्यादि।

गोलाघाट में विभिन्न जयंतियों के आयोजक : सामाजिक जीवन को निर्मल, संस्कारी, आदर्शवान करने के उद्देश्य से तथा नई पीढ़ी को उत्साहित-प्रभावित करने के निमित्त भगवती प्रसाद लडियाजी द्वारा नियमित रूप से आयोजन करने वाली जयंतियों में मुख्य हैं- (क) तुलसी जयंती, (ख) गीता जयंती (ग) हनुमान जयंती और (घ) गांधी जयंती।

(क) तुलसी जयंती : उत्तर प्रदेश के रामभक्त कवि गोस्वामी तुलसीदास (1532-1623 ई.) के 'रामचरित मानस' के प्रभाव को असम के घर-घर में समादृत श्रीमंत शंकरदेव की 'कीर्तन घोषा' के साथ तुलना की जा सकती है। राम-भक्ति के माध्यम से तुलसीदासजी ने मध्य युग में विदेशी शासन में निराश होने वाले भारतीयों को आशा की वाणी सुनाई थी, सामाजिक मर्यादा रक्षा के निमित्त शिक्षा प्रदान की थी। इसलिए महात्मा गांधीजी ने 'रामचरित मानस' की तरह 'रामराज्य' की कल्पना की थी, जहां ऊंचा-नीचा, अस्पृश्यता का कोई भेद नहीं रहेगा; प्रेम-परोपकार-भाईचारे की भावना समाज में छा जाएगी; राम-भरत के भातृ-प्रेम के आदर्श से, सीता का पातिव्रत्य धर्म की शिक्षा से, राम के मर्यादा पुरुषोत्तम रूप से समाज जीवन आलोकित हो सकेगा।

भगवती प्रसाद लडिया ने सन् 1960 ई. में हिंदी पुस्तकालय में तुलसीदास जयंती का शुभारंभ किया था। इसके अध्यक्ष थे प्रदीप चलिहाजी। सन् 1961 ई. सार्वजनिक रूप से आयोजित तुलसी जयंती की अध्यक्षता की थी तत्कालीन देवराज राय कॉलेज के अध्यक्ष कालीचरण दासजी ने। सन् 1962 ई. की सभा की अध्यक्षता की थी विधानसभा के उपाध्यक्ष राजेंद्र नाथ बरुवाजी ने। संभवतः असम के गोलाघाट

में ही सर्वप्रथम तुलसी जयंती का आयोजन हुआ था। सन् 1966 ई. से हिंदी हाई स्कूल की देखरेख में इस जयंती का पालन होता आया है। सन् 1984 ई. में बड़े ही धूमधाम से इस जयंती का आयोजन किया जाता है। स्वागत समिति के अध्यक्ष थे भगवती प्रसाद लडियाजी। डॉ. नगेन सड़किया की अध्यक्षता में होने वाली इस सभा में जोरहाट के हिंदी लेखक-शिक्षक बापचंद्र महंतजी और 'रामचरित मानस' के असमीया-पद्यानुवादक गिरीन बराजी संबद्धित हुए थे। इस जयंती के उपलक्ष्य में आयोजित निबंध प्रतियोगिता में बापचंद्र महंत की कन्या सुश्री सुवासना महंत को प्रथम पुस्कार मिला था।

(ख) गीता जयंती : भगवान श्रीकृष्ण ने महाभारत के युद्ध में उधेरबुन के संकट में फंसे अर्जुन को धीरज बंधाने के लिए मानव जाति के कल्याणकारी गीता का उपदेश दिया था। भगवती प्रसादजी गीता के भक्त थे। सन् 1949 ई. में गोलाघाट के अयोध्या प्रसाद गोस्वामी ने जोरहाट के पंडित धीरेश्वर भट्टाचार्य द्वारा स्थापित गीतार्थी समाज की एक शाखा गोलाघाट में खोलकर आमोलापट्टी के नामघर में गीता प्रचार परीक्षा हेतु गीता पढ़ाने की व्यवस्था की थी। इसमें भी लडियाजी ने सहयोग दिया था। हर वर्ष अगहन महीने में अयोध्या प्रसाद गोस्वामी, भगवती प्रसाद लडिया आदि गीता के भक्तों ने गीता जयंती का आयोजन किया था। सन् 1952 ई. में गोलाघाट एमेचर थिएटर हॉल में फारसी पंडित भागाइवाला ने (तत्कालीन हिसाब अधिकारी) एक विद्वतापूर्ण भाषण देकर सभी को मंत्रमुग्ध किया था। इससे प्रभावित होकर परवर्ती समय में भगवती प्रसाद लडियाजी ने धीरेश्वर भट्टाचार्य के 'श्रीमद्भागवत गीता' का प्रकाशन किया था।

(ग) हनुमान जयंती : केशरी नंदन, आंजेनय पुत्र, पवन पुत्र आदि अनेक नामों से परिचित हनुमानजी रामायण महाकाव्य के एक आदर्श पात्र हैं। राम-भक्त रूप में परिचित हनुमानजी ने असाध्य साधन करके सीता को खोज निकाला था, और लंका दहन किया था। गंधमादन पर्वत से संजीवनी बूटी लाकर मूर्च्छित लक्ष्मण को जीवन दिया था- ऐसे एक वीर भक्त तेजस्वी चरित्र का गायन करने हेतु भगवती प्रसाद लडियाजी ने गोलाघाट में हनुमान जयंती का श्रीगणेश किया था। इस उद्देश्य से गोलाघाट में बौद्धिक माहौल उत्पन्न करने की दृष्टि सन् 1979 ई. में गुवाहाटी से उनके तीसरे पुत्र ज्योतिप्रसाद पंडित तीर्थनाथ शर्मा एवं गौहाटी विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के अध्यापक डॉ. कृष्णनारायण प्रसाद 'मगधजी' को गोलाघाट ले गए थे। हनुमान जयंती की इस सभा में काफी विद्वतजनों का समावेश हुआ था।

(घ) गांधी जयंती : (2 अक्टूबर, 1869- 30 जनवरी, 1948 ई.) गुजरात के पोरबंदर के करमचंद गांधी और पुतलीबाई के सुपुत्र मोहनदास का जन्म पोरबंदर में हुआ था। एंट्रेस परीक्षा पास होने पर वकालत पढ़ने के लिए लंदन गए थे। भारत लौटकर वकालत करने लगे और वकालत के काम के लिए दक्षिण अफ्रीका जाना पड़ा। वहां भारतीय मजदूरों की दुर्दशा देखकर, अंग्रेजों द्वारा शोषित होता देखकर अनेक विपत्तियों के बीच उनका संगठन किया। दक्षिण अफ्रीका में रहते समय भारतीय लोगों को कानूनी सहूलियत देने के लिए वे लड़ते रहे और इसमें काफी सफलता प्राप्त करके सन् 1914 ई के 18 जुलाई को भारत लौटने के लिए जहाज से वापस रवाना हुए। लगातार इक्कीस वर्षों तक दक्षिण अफ्रीका में बीताने वाले गांधीजी ने सन् 1915 ई. के 25 मई को अहमदाबाद में 'सत्याग्रह आश्रम' की स्थापना की। गांधीजी का कांग्रेस में योगदान, स्वतंत्र आंदोलन को नेतृत्व प्रदान करने वाले गांधीजी हरिजन कोष के निमित्त असम दौरे के समय सन् 1934 ई. में गोलाघाट आए थे। किशोर भगवती प्रसाद उन्हें देखकर काफी उत्साहित और अभिभूत हुए थे। गांधीजी ने स्वतंत्र भारत तो देखा, पर इसे रामराज्य करने के सपने को पूरा कर पाते, उसके पहले सन् 1948 ई. के 30 जनवरी को उन्हें शहीद होना पड़ा। गांधी भक्त लडिया जी हर वर्ष 2 अक्टूबर को गांधी जयंती आयोजित कर अपना श्रद्धा-सुमन अर्पित करते थे।

शताब्दी समारोहों में अगुवा लडियाजी : यद्यपि भगवती प्रसाद लडियाजी मारवाड़ी संप्रदाय के थे, फिर भी असमिया भाषा-संस्कृति के प्रति उनका प्रबल आकर्षण था। असमिया साहित्य के नए-पुराने लेखक उनके नख-दर्पण पर होते थे। विशेषतः गोलाघाट के सुसंतान, भाषा-तात्विक हेमचंद्र बरुवा एवं 'जोनाकी' युग के त्रिमूर्तियों के अत्यंत पंडित हेमचंद्र गोस्वामी उनके लिए आदरणीय थे। इस क्रम में असमिया भाषा-साहित्य के दोनों कर्णधारों की जन्म शतवार्षिकी व मृत्यु शतवार्षिकी उद्घाटन के लिए वे अगुवा बने।

पंडित हेमचंद्र गोस्वामी (1872 - 2 मई, 1928 ई.) गोलाघाट महकमे के डेकियाल मौजा के गौरांग सत्र के डम्बरुधर गोस्वामी के पुत्र थे। सर आशुतोष मुखर्जी के उत्साह से सदागर भोलानाथ बरुवा के दस हजार रुपए की आर्थिक सहायता से उन्होंने सात खंडों में 'असमिया साहित्य चानेकि' संकलित-संपादित कर कलकत्ता विश्वविद्यालय में असमिया भाषा की प्रतिष्ठा दिलाई थी। इस पंडित साहित्यकार की जन्मशती सन् 1972 ई. में विपुल उत्साह से संपन्न कराने में

लडियाजी का भी योगदान रहा। उन्होंने डॉ. हेम बरा से लिखवाकर नवीन पुस्तक भंडार से 'पंडित हेमचंद्र गोस्वामी साहित्य प्रतिभा' का प्रकाशन किया था।

भाषा-तात्विक 'हेमकोश' निर्माता **हेमचंद्र बरुवा** (1835-1896 ई.) गोलाघाट के ही सुसंतान थे, यह अनेक लोगों की जानकारी में नहीं थी। बहुत लोग उन्हें शिवसागर के रहने वाले जानते हैं, क्योंकि उनकी शिक्षा, नौकरी जीवन की शुरुआत शिवसागर में हुई थीं। इस संदर्भ में उनकी पुण्यतिथि मनाने के लिए प्रेरित करने वाले लडियाजी के बारे में गोलाघाट के डॉ. अजित बरुवा का संस्मरण इस प्रकार का है- "सन् 1996 ई. में मैं गोलाघाट शाखा साहित्य सभा के संपादक के दायित्व में था। उसी समय किसी एक दिन एक पुस्तक की खोज में नवीन पुस्तक भंडार गया था, उन्होंने (लडियाजी) मुझे देखकर पूछा, 'अजीत, तुम गोलाघाट साहित्य सभा के संपादक नहीं हो क्या? इस वर्ष में ही हेमचंद्र बरुवा की पुण्य-शती है, तुम्हें कुछ पता चला है क्या? इस महान साहित्यकार को स्मरण करना हमारा जातीय दायित्व है, वे गोलाघाट के व्यक्ति थे और गोलाघाट का दायित्व ही अधिक है। अखबारों में उनकी पुण्य-शती का कोई समाचार न देखने के कारण ही तुम्हें यह बताया। उन्नीसवीं सदी में असमिया भाषा-साहित्य के लिए आत्मोत्सर्ग करने वाले इन व्यक्तियों को भूल जाना अच्छी बात नहीं है।' मैं इस संबंध में कुछ न जानने की स्वीकारोक्ति देकर और उनकी बात को ध्यान में रखकर कार्यकारिणी में विचारार्थ उपस्थापित करने का वादा कर लौट आया। कुछ दिनों के बाद कार्यकारिणी में प्रस्ताव स्वीकृत हुआ, परंतु हेमचंद्र बरुवा का जन्म गोलाघाट में ही हुआ था, इसके बारे में कोई ठीक से बता नहीं पाया। मैं लडियाजी को इसकी सूचना देने के लिए जाते समय कहा- 'पुण्य-शती का कार्यक्रम एक दिन में उद्घाटित किया जाएगा और इसके लिए होमेन बरगोहाई को बुलाने का निश्चय किया गया। परंतु उनका जन्म गोलाघाट है या शिवसागर- इसे नहीं समझ पा रहा हूं। उनसे संबंधित पुस्तकों में शिवसागर का ही उल्लेख है।' लडियाजी पुण्य-शती को मनाने के निर्णय पर अत्यंत खुश हुए और होमेन बरगोहाई को आमंत्रण करने पर कहा, 'अच्छा किया है, वे बहुत अच्छा और व्यतिक्रम धर्मी लेख लिखते हैं, पर वे आएंगे क्या? आने पर बहुत अच्छी बात होगी।' हेमचंद्र बरुवा के जन्म के संदर्भ में लडियाजी ने कहा, 'उनके जन्म का स्थान है देरगांव कमल दुवरा महाविद्यालय के समीपस्थ रजाबाहर गांव। वंश-परिवार का पता खोजने पर मिल जाना चाहिए। मेरी जानकारी में हरिजन कॉलोनी के पास के प्रेम बरुवा की पत्नी उसी वंश की है। बचपन में पिताजी के

देहांत होने पर अवश्य वे चाचा के घर में रहकर शिवसागर में ही पले-बढ़े थे, पढ़ाई की थी। शिवसागर के रजाबाहर गांव का नाम जो लिखा जाता है, वह वस्तुतः होना चाहिए तब के अविभक्त शिवसागर जिला के अंतर्गत गोलाघाट के देरगांव इलाके का रजाबाहर गांव- समझे न?’

(नियमीया वार्ता, 5 जुलाई, 2015 ई.)

अंततः गोलाघाट के एमेचर थिएटर हॉल में हेमचंद्र बरुवा की पुण्य-शती का कार्यक्रम संपन्न हुआ। इस सभा में होमेन बरगोहाई ने एक सारगर्भित भाषण दिया। स्मर्तव्य है हेमचंद्र बरुवा ने अपनी आत्मजीवनी में स्पष्ट लिखा है- ‘1557 शक के अगहन महीने के 24वें दिन मंगलवार कृष्णा चतुर्थी की रात को शिवसागर जिले के रजाबाहर नामक स्थान पर पैत्रिक घर में मेरा जन्म होता है। मेरे पिताजी का नाम है- मुक्तराम बरुवा, वे संस्कृत भाषा के और आयुर्वेद के ज्ञाता के रूप में प्रसिद्ध थे।’ इसी अवसर पर भगवती प्रसाद लडियाजी ने डॉ. हेम बरुवा से लिखाकर ‘उनविंश शतिका असमिया साहित्य आरु हेमचंद्र बरुवा’ शीर्षक ग्रंथ घनश्याम लडिया द्वारा भगवती प्रकाशन से प्रकाशित कर भाषा-साहित्य के उन महान पुजारी के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की थी।

राजनैतिक राष्ट्र-नेताओं में गांधीजी के उपरांत डॉ. राजेंद्र प्रसादजी के प्रति लडियाजी के मन में काफी आदर था। डॉ. राजेंद्र प्रसादजी (3 दिसंबर, 1884-28 फरवरी, 1963 ई.) स्वतंत्र भारत के प्रथम राष्ट्रपति थे। उनका जन्म 1884 ई. के 3 दिसंबर को बिहार के सारण जिले के जीराबाई गाँव में हुआ था। पिता महादेव सहाय एक जमींदार थे। भारत के स्वतंत्र आंदोलन में योगदान कर उन्हें अनेक विपत्तियों को झेलना पड़ा। सन् 1952 ई. में उन्हें भारत का सर्वोच्च सम्मान ‘भारत-रत्न’ प्रदान किया गया था। भगवती प्रसाद लडियाजी ने डॉ. राजेंद्र प्रसाद की जन्मशती का आयोजन नवीन पुस्तक भंडार में किया था। इस अवसर पर डॉ. हेम बरुवा से लिखाने वाली ‘भारतरत्न डॉ. राजेंद्र प्रसाद’ शीर्षक पुस्तक का विमोचन श्री माखन दुवरा से कराया गया। इस आयोजन में गोलाघाट के काफी गणमान्य व्यक्ति पधारे थे। इसी तरह लडियाजी ने भारत के इस महान पुरुष के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की थी।

लडियाजी ने वैयक्तिक उद्योग लेकर सन् 1992 ई. में पंडित ध्यानदास शर्मा और 2004 ई. में स्वतंत्रता सेनानी रामदास रविदास की जन्मशतियों का पालन कराया।

पत्रकारिता एवं निबंधकार : 1936 ई० में उत्राव (उ.प्र.) के पाठकपुर गाँव से वंशगोपाल वाजपेयी नामक एक व्यवसायी का गोलाघाट में व्यापारी कारणों से आना-जाना लगा रहता था। वे साथ में विप्लाविक विचारधारा की पत्र-पत्रिकाएं सैनिक, प्रताप, नवशक्ति, वीणा, सरस्वती, आर्य पत्रिका, आर्य, मार्तंड, हंस आदि लाते थे। इन्हें भगवती प्रसाद लडियाजी को पढ़ने का अवसर मिला। वाजपेयीजी के प्रोत्साहन से लडियाजी का आग्रह पत्र-पत्रिकाओं के अध्ययन एवं पत्रकारिता में बढ़ा। इससे उन्हें स्वतंत्रता आंदोलन में जोश से भाग लेने के लिए भी प्रोत्साहन मिला। वाजपेयीजी के साथ साथ सोलह वर्ष की आयु से ही हरिश चन्द्र गोस्वामीजी, कृष्णप्रसाद बेजबरुआ, रामचन्द्र दास, दौलेश्वर दत्त, देवेश्वर राजखोवा आदि से भी लडियाजी को पत्रकारिता में आगे बढ़ने की प्रेरणा मिली। भगवती प्रसाद लडियाजी ने नियमित रूप से असमिया और हिंदी पत्रों को पढ़ते थे। उनके इस अभ्यास से वे पत्रकारिता की ओर बढ़ चले।

हिंदी पत्रों में से ‘विश्वामित्र’, ‘सन्मार्ग’, ‘लोकमान्य’, ‘पंजाब केशरी’, ‘पूर्वज्योति’ और ‘जागृति’ (गुवाहाटी), तिनसुकिया के ‘अकेला’ के लिए वे समाचार भेजते थे। गुवाहाटी से प्रकाशित ‘पूर्वांचल प्रहरी’ और ‘सेंटिनल’ के लिए भी वे समाचार भेजा करते थे।

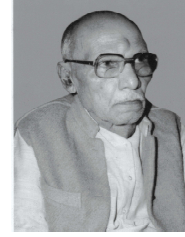
असमिया पत्रों में हरेंद्र नाथ बरुवा एवं राधिका मोहन भागवती संपादित ‘नतुन असमीया’, कीर्तिनाथ हाजरिका संपादित ‘दैनिक असम’ और राधिकामोहन भागवती के ‘आजिर असम’ में वे गोलाघाट के संवाददाता की भूमिका निभाते थे।

परवर्ती समय में लडियाजी का अन्य एक रूप सामने आता है, वह है उनके निबंधकार का रूप। विशेष रूप से सान्निध्य प्राप्त करने वाले और आदर्श के रूप में स्वीकार करने वाले व्यक्तियों के बारे में वे बराबर आलेख बगैरह लिखते थे। ‘विश्वामित्र’, ‘सन्मार्ग’, ‘लोकमान्य’, ‘पूर्वज्योति’, ‘जागृति’, ‘अकेला’, ‘पूर्वांचल प्रहरी’, ‘सेंटिनल’, ‘राष्ट्र-सेवक’, ‘नतुन असमिया’, ‘जन्मभूमि’, ‘दैनिक असम’, ‘आजिर असम’, ‘अग्रदूत’, ‘नागरिक’ आदि हिंदी-असमिया पत्र-पत्रिकाओं में विगत सदी के अस्सी-नब्बे के दशक से शताधिक लेख लिखने के बावजूद उन्हें संकलित करने के बारे में कभी नहीं सोचा था। इससे इनकी साहित्य प्रतिभा का एक पक्ष अंधेरे में ही रह गया। लिखना उन्होंने अपना एक सामाजिक दायित्व समझा था, अपने नाम-यश के लिए उन्हें कोई आकर्षण न था। भगवती प्रसाद लडियाजी लिखित छोटे-

बड़े लेखों को अगर संकलित-संपादित किया जाए तब उनके व्यक्तित्व का अन्य एक पक्ष उजागर होगा।

निष्कर्ष : गोलाघाट नवीन पुस्तक भंडार के भगवती प्रसाद लडियाजी मूलतः सामाजिक व्यक्ति थे। स्वतंत्रता संग्राम की हवा से उनका कैशोर-यौवन आंदोलित हुआ था, स्वतंत्रता के उपरांत वह कर्म-शक्ति सामाजिक कल्याण के कार्यों में नियोजित हुई। पुस्तक-व्यवसाय के माध्यम से सारस्वत साधना का रास्ता दिखाकर सामाजिक-सांस्कृतिक-साहित्यिक कल्याण में वे आत्मोत्सर्ग करना चाहते थे, परंतु प्रतिदान न चाहते थे। हमेशा सामाजिक जीवन जीने में उन्हें लालसा थी।

लडियाजी चाहे या न चाहे समाज से उन्हें पर्याप्त सम्मान प्राप्त हुआ था। इस संदर्भ में कहा जा सकता है सन् 1979 ई. में गोलाघाट बिहू समिति से वे संबद्धित हुए थे। गोलाघाट कवि-चक्र का विशेष महत्व है। समग्र गोलाघाट के कवियों एवं साहित्यकार-साहित्यानुरागियों से बनी इस संस्था से नियमित रूप में कवि-गोष्ठियों का आयोजन होता था। सन् 1985 ई. में विशिष्ट आधुनिक असमिया कवि नवकांत बरुवा के विशिष्ट अतिथि के रूप में योगदान करने वाले कवि सम्मेलन में लडियाजी को संबद्धित किया गया था। सन् 1995 ई. में गोलाघाट में आयोजित पुस्तक मेले में विशिष्ट प्रकाशक के रूप में लडियाजी को सम्मानित किया गया। सन् 1998 ई. में गुवाहाटी में आयोजित उत्तर-पूर्व ग्रंथ मेला में अखिल असम पुस्तक प्रकाशन एवं विक्रेता संस्था ने भी उन्हें सम्बद्धित किया था। समाजसेवी लडियाजी सन् 1998 ई. में मारवाड़ी युवा मंच, देरगांव शाखा की तरफ से सम्मानित हुए। 2001 ई. में मारवाड़ी सम्मेलन होजाई ने भी सम्मानित किया। भगवती प्रसादजी के स्वतंत्रता संग्राम के सहयोद्धा और परवर्ती समाज में कांग्रेस के विशिष्ट नेता बनने वाले समाजसेवी रामदास रविदास की जन्मशती के उपलक्ष्य में सन् 2004 ई. में आयोजित सभा में लडियाजी को उनकी अतुलनीय सेवा के निमित्त सम्मान प्रदर्शित किया गया था। कहना चाहिए विगत शती के छह दशकों से ऊपर काल भगवती प्रसाद लडियाजी गोलाघाट के समाज के एक अभिन्न अंग बन गए थे, इसमें कोई दो राय नहीं है।



मोहक व्यक्तित्व

सूचना : गोलाघाट के नवीन पुस्तक भंडार के प्रतिष्ठापक भगवती प्रसाद लडिया के 86 वर्षों के जीवन को विशलेषण किया जाए तो देखा जाता है कि उनका संपूर्ण जीवन किसी न किसी उद्देश्य से प्रेरित रहा है। 'दादी के गोले' में व्यवसाय करने वाले किशोर भगवती प्रसाद ने स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया, राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार में लगन से जुड़ा; युवक होने पर पुस्तकालय निर्माण से लेकर अनेक सामाजिक कार्यों में रुचि ली और 30 वर्ष होते ही पैतृक व्यवसाय की परंपरा को तोड़कर सारस्वत साधना से जुड़ने के लिए पुस्तक का व्यवसाय प्रारंभ किया। व्यवसाय के साथ अध्ययन, पत्रकारिता, अपनी व्यवसायिक संस्था को बौद्धिक चिंतन-मनन का केंद्र बनाना, समानांतर विभिन्न सामाजिक कार्यों की गतिविधियों से जुड़ना आदि से उनका कार्य एवं चिंतन पक्ष सामने आते हैं। वे प्रचार विमुख थे, अपने सांसारिक एवं व्यवसायिक दायित्वों का निर्वाह करते हुए भी वे स्थितप्रज्ञ की भांति केवल अपने काम से ही मतलब रखते थे। इसलिए उनके इक्यासीतम जन्मदिवस के अवसर पर असम के जाने-माने साहित्यकार-पत्रकार **होमेन बरगोहाई** ने इस प्रकार अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की है :

श्री भगवती प्रसाद लडियाजी कोई बहुत ख्यातिमान व्यक्ति नहीं हैं। हर रोज उनका नाम अखबार में छपता नहीं है। परंतु जिन आदर्शवादी महत् चरित्र के लोगों से धीरे-धीरे समाज की बुनियाद बनती है, उनमें से एक श्री भगवती प्रसाद लडियाजी भी हैं। इन्हें कोई ख्याति या पुरस्कार की आकांक्षा नहीं रहती, बदले में ऐसे लोग कुछ भी नहीं चाहते। अपना काम और अपनी ईमानदारी ही एकमात्र पुरस्कार है। लंबे अंतराल से भगवती प्रसाद लडियाजी ने असम मातृ की सेवा की है। देश जब पराधीन था तब वे स्वतंत्रता संग्राम से जुड़े थे। देश स्वतंत्र होने के बाद राष्ट्रीय एकता का अन्यतम प्रतीक हिंदी के

प्रचार-प्रसार में कार्यरत रहे। परंतु असमीया समाज द्वारा उन्हें स्मरण करने का कारण है असमीया भाषा-साहित्य के प्रति उनका अमूल्य योगदान। राजस्थानी परिवार में जन्मे लडियाजी ने अपने जीवन का अधिकतम समय असमीया भाषा-साहित्य की उन्नति के लिए व्यतीत किया है। उनका साहित्यानुराग इतना प्रबल है कि अधेड़ उम्र में पारिवारिक व्यवसाय त्याग कर पुस्तक-प्रकाशन से जुड़ना। जिन महानुभाव राजस्थानियों ने मातृभूमि असम के प्रति निष्ठापूर्वक कार्यरत होकर एक वृहत्तर असमीया समाज के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है उनमें श्री लडियाजी अग्रणी हैं। गीता का निष्काम कर्मयोग उनका आदर्श है। वे एक श्रेष्ठ असमीया हैं और साथ ही एक श्रेष्ठ भारतीय भी हैं। मैं उनकी दीर्घायु कामना करता हूँ और साथ ही श्रद्धापूर्वक नमन करता हूँ।

□ **अध्ययनशीलता** : भगवती प्रसाद लडियाजी के पिता लक्ष्मी चंद्रजी बड़े ही अध्ययनशील व्यक्ति थे। 'दादी के गोला' में व्यवसाय करते समय भी वे फुर्सत के अवसर पर धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन करते रहते थे। अपनी शैशवास्था में भगवतीजी ने अपने पिता को अध्ययन करते हुए देखा था जिनका अमिट प्रभाव उनके मन पर पड़ा।

□ **ज्ञानानुरागी** : भगवती प्रसाद लडिया ने अपने नवीन पुस्तक भंडार को केवल व्यवसाय केंद्र ही नहीं बनाया था, बल्कि इसे ज्ञानार्जन का स्थान भी बनाया। असमीया, हिंदी, बांग्ला, अंग्रेजी से चुनी हुई पुस्तकों को वे अपनी दुकान में रखते थे जिसे पढ़कर पाठकों को ज्ञानार्जन हो सके, किशोरगण अपने जीवन को आदर्शमय बना सके। वे स्वयं उनके पुस्तकों का अध्ययन करते थे और किताबों की सारी जानकारी रखते थे। इसलिए ग्राहकों को उनकी मानसिकता के आधार पर वे पठनीय साहित्य को आसानी से बतला सकते थे।

□ **हंसमुख** : वे हमेशा हंसमुख स्वभाव के थे। कोई भी आगंतुक हो, वे हंसकर स्वागत करते थे और रुचि लेकर बात करते थे। उन्हें गुस्सा नहीं आता था, प्रतिकूल स्थिति में भी हंसी-हंसी में समस्या को सुलझाने का प्रयास करते थे। इसी मीठे स्वभाव के कारण जो कोई उनसे एक बार मिलता शायद ही उन्हें भूल पाता। वे ऊंचे स्वर पर बात नहीं करते थे, हमेशा धीरे-धीरे बात करते थे।

□ **आतिथ्य-सेवा** : अतिथियों को लडियाजी बड़े ही आदर करते थे और

सत्कार में कोई कमी नहीं करते थे। गोलाघाट टाउन हिंदी हाईस्कूल में सन् 1951 ई. में नौवीं कक्षा में पढ़ते समय लडियाजी से परिचित होने वाले एवं परवर्ती समय में कछारीहाट स्कूल में शिक्षक बनने वाले सर्वानंद मजुमदार ने इस प्रकार लडियाजी के बारे में स्मरण किया है- "एक दिन रात को आंधी के कारण मैं घर लौट न सका, लडियाजी की दुकान नवीन पुस्तक भंडार में रुकना पड़ा। सोने के समय उन्होंने मुझे एक नई धोती पहनने के लिए देते समय मैंने मना किया तो उन्होंने जवाब में कहा- 'आप ब्राम्हण हैं, हम अपने कपड़े आपको कैसे दे सकते हैं? ऐसा करने पर हमें पाप लगेगा।'"

(अरावली से धनश्री तक, 2006 ई. पृ. 48)

□ **असम-प्राण** : मूलतः राजस्थानी परिवार के होते हुए भी भगवती प्रसाद लडियाजी सच्चे हृदय से असमीया हो गए थे। असम से संबंधित बहुत-सी जानकारियां उन्हें थीं और कोई भी पूछे तो बता सकते थे। इस संदर्भ में उनके पोता-सम गोलाप सड़किया का उद्गार इस प्रकार है- "लडियाजी का रहन-सहन, सज-धज, बर्ताव वगैरह सभी में एक सात्विक भावना दिखलाई पड़ती थी जिससे उन्हें ऊर्ध्वगति प्राप्त होनी चाहिए। जहां व्यक्ति है वहां व्यक्तित्व भी है। कार्य के माध्यम से व्यक्ति का व्यक्तित्व झलकता है। व्यक्ति से मेल-जोल बढ़ने पर उनके व्यक्तित्व का अंदाज लग सकता है। लडियाजी से संपर्क में आने पर मुझे ज्ञात हुआ कि भले ही वह राजस्थानी मूल के हैं, परंतु असमीया समाज के पुराने गानों एवं उनके प्रसिद्ध व्यक्तियों के बारे में वे आसानी से बतला सकते थे। जो व्यक्ति एक ओर सफल व्यवसाई हैं, स्वतंत्रता सेनानी हैं, हिंदी भाषा के प्रचारक हैं, गोलाघाट के विविध शैक्षिक-प्रतिष्ठानों से संलग्न हैं, दूसरी ओर वे जब किसी भी विषय पर बात छेड़ते हैं तो सुनते रहने की चाहत होती है, श्रद्धा से उनके प्रति सर झुक जाता है।" (वही, पृ. 54-55)

□ **परोपकार की नसीहत** : भगवती प्रसाद लडिया ने केवल सत्रह (1937) वर्ष की आयु में राजस्थान के नवलगढ़ निवासी जयदेव मुरारका की कन्या से विवाह किया था। वह एक बार साले रामस्वरूप मुरारका को पांच रुपए देकर कहा था कि इससे गरीब बच्चों को पुस्तक खरीद कर देना। उस समय पुस्तकें काफी सस्ती थीं, एक आने, दो आने दाम में मिल जाती थीं। बहनोई द्वारा दिखाया गया हुआ आदर्श रामस्वरूपजी ने जीवनभर पालन किया, भले ही राशि में काफी वृद्धि हुई हो।

□ **समाज सेवा का पाठ** : सन् 1965 ई. में आठवीं कक्षा में पढ़ने वाले विद्यार्थी

माखनलाल बाढ़े का लडियाजी से परिचय हुआ था। उस समय माता के अतिरिक्त उनका कोई अपना ना था। वह फोटो, पुस्तक बेचकर पढ़ाई का खर्चा निकालता था। लडियाजी अपनी दुकान से उधार पर उसे किताब बेचने के लिए देते थे। सन् 1967 ई. में हिंदी 'कोविद' परीक्षा के लिए उनका प्रपत्र भर दिया। वही माखनलाल को सन् 1972 ई. में खुमटाई हाईस्कूल में शिक्षकों की नौकरी मिली। फिर भी लडियाजी हमेशा उसे आगे पढ़ाई जारी रखने के लिए प्रेरित करते थे, जिससे वह स्नातक बन सका। इसी माखनलाल ने भगवती प्रसाद लडियाजी को इस प्रकार स्मरण किया है- "लडियाजी हमेशा मुझे कहते थे- 'माखन तुम अपना समाज को छोड़ना मत। हमेशा लोगों से अच्छा संबंध रखना। शिक्षक की नौकरी करने पर हमेशा अच्छी बातों पर ध्यान दे सकोगे। बच्चों को पढ़ाने जैसा अन्य कोई पवित्र काम नहीं है। लोग क्या कहता है या क्या देगा उस पर कतई ध्यान नहीं रखना चाहिए। तुम्हारा समाज पिछड़ा हुआ है। अतः तुम उसे छोड़ना मत।' सन 1980 ई. में माखनलाल को गुवाहाटी इनकम टैक्स ऑफिस में स्टेनोग्राफर की नियुक्ति मिली थी। वह असमंजस में था कि शिक्षकता का छोड़ दे या नए पद पर ज्वाइन कर ले। इस पर जब उसने लडियाजी से सलाह मांगी तो उन्होंने इतना ही कहा- 'माखन तुम्हें बहुत अच्छी नौकरी मिली है। कम दिनों में काफी धनी बन जाओगे परंतु समाज-सेवा की नौकरी नहीं मिलेगी। अतः गंभीरतापूर्वक सोच लेना।'"

(वही, पृ. 37)

□ **जेब ऑफिस** : यह लेखक जब लडियाजी से मिला था तब देखा था उनके बनियान का जेब काफी फुला हुआ था, वहां वे बहुत कागज संभाल कर रखते थे। ऐसा कि उनके प्रकाशित लेख वगैरह भी तह करके जेब में रखते थे। उनकी याददाश्त काफी तेज थी, इसलिए जब किसी कागज की जरूरत पड़ती थी तो तुरंत निकाल कर देते थे। इस संदर्भ में गोलाघाट के 'पुथि तीर्थ प्रकाशन' के श्री क्षीरोद कुमार गोस्वामीजी की टिप्पणी इस प्रकार है- "सुदीर्घ जीवनकाल में लडियाजी विभिन्न सामाजिक-साहित्यिक-सांस्कृतिक कार्यों से जुड़े रहे। ऐसी संस्थाओं के विभिन्न कागज संभाल कर रखते थे अपने दोनों जेबों में। कागजों के बीच में अपनी टिप्पणी भी रखते थे। प्रथम जेब बनियान कुर्ता का जेब है। इस बनियान और जेब को विशेष ढंग से सिलाई की जाती थी। आधा हाथ वाले बनियान के बीच में ही कंगारू जेब रहता। खादी कपड़े से विशेष रूप से सिलने वाले इस कुर्ते का जेब ही उनके कार्यालय की अलमारी का काम करता था। दूसरा जेब था कुर्ते के ऊपर

का। इस जेब की विशेषता थी- कई विषयों के, कई संस्थाओं के, कई आकृति के कागज को मोड़कर रखने का भंडार। जरूरत पड़ने पर बिना विलंब किए वे कागज निकाल कर देते थे या किसी को देते थे। कभी ऐसा होता कि कागज डालते-डालते यह जेब फुल कर कुप्पा बन जाता था। उसके पुत्र ज्योति या सोहन अगर उन्हें आगाह करके कहते कि पिताजी कुछ कागज अब निकाल लेना चाहिए, तब वह हंसकर इसे टाल देते थे। जेब से कागज निकालने का कोई प्रश्न ही नहीं, अगर मिल जाए तो दो-चार और डालने के लिए ही सोचते। इसलिए हम इसे जेब ऑफिस कहा करते थे।" (प्रकाशकर डायरी- बंदी टोका, पृ. 14-15)

□ **प्रचार विमुख** : भगवती प्रसाद लडियाजी प्रचार विमुख थे। वे नहीं चाहते थे कि उनकी बातों का प्रचार हो। यह सन् 1990-91 ई. की बात है। देरगांव कमल दुवरा कॉलेज के अध्यापक लक्ष्मीकांत महंतजी अक्सर आकर लडियाजी के पास बैठते कि उनके बारे में कुछ लिखा जाए, पर वे कुछ भी बोलने के लिए आनाकानी करते। जो भी हो, आखिर महंतजी ने देरगांव से करीब आठ महीने कॉलेज से सीधे आकर लडियाजी के समय और उनसे जुड़ी हुई कुछ बातों को नोट करके अस्सी पृष्ठों की पांडुलिपि 'सरल आरु सुन्दर जीवनर आदर्श : भगवती प्रसाद लडिया' उनके छोटे पुत्र घनश्याम लडिया को दिया और कहा- भगवती प्रसाद लडियाजी को देखने के लिए देना। जब घनश्याम लडिया ने महंतजी से पूछा कि आपने किस उद्देश्य से यह महत्वपूर्ण कार्य किया, तो उन्होंने कहा- मेरे जैसे बहुत से गरीब परिवार के विद्यार्थी थे और मैं भी गरीब परिवार से था, उन्हें भगवती प्रसादजी पढ़ने-लिखने के लिए किताब देते थे तथा आर्थिक रूप से मदद करते थे। इसलिए मैंने उनका ऋण चुकाने के लिए इस पुस्तक की रचना की है। परंतु भगवती प्रसाद लडियाजी ने उसे छिपा दिया। दुर्भाग्य से महंतजी का देहांत हो गया। लडियाजी ने मृत्यु के कुछ समय पूर्व अपने छोटे बेटे घनश्याम को उसे सौंप दिया। घनश्याम ने काफी प्रयास के बावजूद उसे संपादित करके प्रकाशित नहीं कर पाया। भगवती प्रसादजी नहीं चाहते थे कि इसका प्रचार-प्रसार हो।

□ **निस्पृह** : तत्कालीन दरंग कॉलेज के अध्यक्ष स्वतंत्रता संग्राम के अन्यतम सहयोगी कामाख्या प्रसाद त्रिपाठीजी के साथ भगवती प्रसाद का घनिष्ठ संबंध था। गोलाघाट के विविध कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए त्रिपाठीजी आते रहते थे, स्वतंत्रता के बाद जब वे असम सरकार के श्रम एवं उद्योग मंत्री बने तब अनेक स्वतंत्रता संग्रामियों ने सरकार से काफी फायदा उठाया। एक बार मंत्री त्रिपाठीजी

गोलाघाट आए और लडियाजी को एक उद्योग खोलने का अनुज्ञा पत्र सौंपा। लडियाजी ने उसे पढ़ा और फाड़कर त्रिपाठीजी के जेब में डालते हुए कहा, 'कामाख्या, स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया था देश की आजादी के लिए, अपने व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए नहीं।'

□ **गुप्त दान** : समय-समय पर लडियाजी विपन्नों को दान करते आए हैं, परंतु इसे वे किसी को बताते नहीं थे। ऐसा एक उदाहरण है- असमिया साहित्य के कवि- नाटककार जोरहाट के आनंद चंद्र बरुआ जब अस्वस्थ चल रहे थे तब लडियाजी उनसे मिलने आए। उस समय बरुआजी की तंगी हालत थी। लडियाजी चुपकेसे कुछ रुपए उनके तकिए के नीचे रख कर चले आए। जब बाद में बरुआजी को इसका पता चला तब लडियाजी को उनके चार नाटकों को छापने के लिए दिया। अवश्य लडियाजी ने नवीन पुस्तक भंडार से उनके केवल दो नाटकों 'विजया' और 'विसर्जन' को छपा।

□ **जीवंत किम्बदंतीस्वरूप** : "असम के बौद्धिक समाज में अपनी एकाग्रता, निष्ठा एवं आदर्श के बल पर परिचित तथा आदर के पात्र होने वाले आदरणीय भगवती प्रसाद लडियाजी- दधि महंत, खर्गेश्वर तामुली, धीरेन दत्त, बेदव्रत बरुआ, देव प्रसाद बरुवा, राम गोस्वामी, नीलमणि फुकन, पं. ध्यानदास शर्मा, दौलेश्वर दत्त, इंद्रचंद्र लीला, सीताराम ढंढारिया, यदुनाथ सड़किया, पंडित बैकुंठनाथ सिंह, सुरेश फुकन, प्रफुल्ल चलिहा, सोनेश्वर बोरा, राजेंद्र नाथ बरुवा, केशवचंद्र सोनोवाल, दंड हाजरिका आदि अनेक यशस्वी व्यक्तियों के केवल संपर्क में ही नहीं आए बल्कि उनके माध्यम से साहित्य-संस्कृति-इतिहास और सर्वोपरि मानवता का ज्ञान प्राप्त कर धन्य हुए। उनकी व्यवसायिक ईमानदारी, सामाजिक-सांस्कृतिक कार्यों, अडिग आदर्श, शिक्षा विस्तार के लिए किए जाने वाले पहल एवं समर्पित कर्मनिष्ठा के कारण वे जीवनकाल में ही किंवदंती बन गए थे। गोलाघाट और असम के इतिहास के जानकार, अनेक परिवारों के वंश-वृत्तांत जानने वाले असम के स्वतंत्रता आंदोलन की घटनाओं को हू-ब-हू बताने वाली उनकी स्मृति गजब की थी। इस संदर्भ में हमें इतना स्वीकारना पड़ेगा कि असम की धरती के प्रति उनके आदर की भावना कूट-कूट कर भरी हुई थी।देश के स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़ने पर भी उन्होंने सरकारी पेंशन स्वीकार नहीं किया; पत्रकारिता से मिलने वाली पारितोषिक को भी स्वीकार न करना, अनेक गरीब विद्यार्थियों को फीस, कॉपी-पुस्तकें देकर सहायता पहुंचाना, गांवों में पुस्तकालय स्थापन के लिए अग्रणी भूमिका अदा करना आदि

ऐसे अनेक विषय हैं, जिनके आधार पर लडियाजी का नया मूल्यांकन अपेक्षित है- इसमें कोई संदेह नहीं है।" -**बाजिदुर रहमान**

(बनलता साहित्य, 2010 ई., पृ.129-30)

□ **राजनीतिक संन्यास** : महात्मा गांधीजी ने आग्रह किया था कि स्वतंत्रता के बाद कांग्रेस को भंग किया जाए। लडियाजी गांधी जी के अनुयायी थे। इसलिए सन् 1962 ई. से उन्होंने राजनीति छोड़ दिया। किसी भी राजनीतिक दल से वे संबद्ध नहीं हुए। अवश्य वे राम मनोहर लोहियाजी के समाजवाद से काफी प्रभावित थे।

□ **लडियाजी का जीवन दर्शन** : कमल दुवरा कॉलेज देरगांव के कृतकार्य दर्शन विभाग के अध्यापक डॉ. गिरीश बरुवा सन् 1989 ई. से भगवती प्रसाद लडियाजी से जुड़े थे। उन्होंने नजदीक से लडियाजी को जाना-पहचाना और उनके विचारों को साझा किया। डॉ. बरुवाजी ने उनके जीवन दर्शन को इस प्रकार शब्दबद्ध किया है :

□ सरल जीवन यापन और उच्च विचार (Simple living and high thinking)- इस वाक्य को लडियाजी के जीवन पर शत-प्रतिशत लागू किया जा सकता है। सरलता उनका आदर्श है। महात्मा गांधीजी के एक आदर्शवान शिष्य होने के नाते सरलता को उन्होंने भी अपने जीवन में भरपूर प्रयोग करने का प्रयास किया है। गांधीजी मानवता के ऊंचे शिखर पर पहुंचने पर भी उन्होंने धरती को त्यागा नहीं था। व्यक्ति अपने जीवन के सदाचारी अनुभवों से ज्ञानी होता है। गांधीजी ने सरलता एवं सच्चाई को जिस तरह अभिन्न करके देखा था, वैसे लडियाजी भी देखते थे। इसलिए वे सरल और सत् थे। जीवन में उन्होंने कभी असत्य को स्थान नहीं दिया। (साहित्य, सन् 2005 ई., पृ. 4)

□ हमने सन् 1989 ई. से उन्हें निरीक्षण किया है। उनके साथ काफी समय बीता कर, अनेक चर्चा में भाग लेकर काफी समय व्यतीत किया है। उनसे हमने काफी सीखी, क्योंकि हमारा अनुभव केवल पुस्तकीय है। जिन कर्मों से जीवन को सार्थक बनाया जा सकता है, उनसे हम बचे रहते हैं। भारतीय विरासत के एक अमूल्य ग्रंथ गीता से हमें कर्मयोगी बनने की शिक्षा मिलती है। परंतु हम गीता के उस आदर्श से दूर भागते हैं, क्योंकि स्वार्थ हानि होने का डर हमें सताता है। परंतु लडियाजी ने संपूर्ण जीवन में कर्मयोगी बनने का प्रयास किया। सचमुच यह काम अत्यंत कठिन है, क्योंकि इसके लिए त्याग की आवश्यकता होती है। हम वह त्याग करने के लिए आग्रही नहीं हैं। (वही, पृ. 5)

□ कुछ लोग जन्म से ही अपने में सिमट कर रह जाते हैं, परंतु लडियाजी का जन्म दूसरों के लिए हुआ था। संपूर्ण वसुंधरा उनका अपना है; सभी के प्रति आत्मीय भाव रखना, सभी का हित चाहना उनका ध्येय माना जा सकता है। जन-स्वार्थ को ही उन्होंने अपना स्वार्थ स्वीकार किया था।

लडियाजी में कर्मयोगी एवं ज्ञानयोगी दोनों का समन्वय देखा जा सकता है। ज्ञानी और ज्ञान को आदर करने वाला व्यक्ति कभी अज्ञानी नहीं हो सकते हैं। 'श्रद्धावान लभते ज्ञानम्' गीता के इस कथन को स्वीकार करते हुए उन्होंने सभी के प्रति श्रद्धा प्रदर्शित किया है। पाश्चात्य में ज्ञान के प्रति आदर रखने वालों को दार्शनिक कहा जाता है। इस मायने में लडियाजी एक दार्शनिक थे।

लडियाजी ने कोई कोताही न बरतकर सभी के प्रति स्नेह प्रदर्शन किया था। उनका स्नेह केवल परिवार के सदस्यों में ही सीमित न था, वह किसी के लिए भी उपलब्ध था। उनके जीवन में कंजूसी की कल्पना कोई कर नहीं सकता था। इसमें भी उन्होंने गीता का आदर्श को अपनाया था। गीता में साफ कहा है- 'कर्मण्ये दोषः उपहत स्वभावः' यानी कंजूसी से आदमी की आदत बिगड़ती है। तन-मन-धन-इन तीनों क्षेत्रों में कंजूसी अच्छी नहीं है। भले ही धन का कोई दरिद्र हो पर मन का दरिद्र नहीं होना चाहिए। जिसे जो कुछ दिया जा सकता है, देना चाहिए। भूपेन हाजरिका ने गाया है- 'जितना ही बांटोगे उतना ही महान बनोगे, उसी का नाम है सच्ची उदारता।' यह सिद्धांत लडियाजी पर लागू होता है। उन्होंने ज्ञान-विद्या, पुस्तकें, उपदेश आदि सभी को बांटकर आदर्श स्थापित किया है, जिससे नई पीढ़ी को मार्गदर्शन मिल सके।

('क्या नाम देकर पुकारूं तुम्हें? अजी भगवती प्रसाद लडिया' शीर्षक निबंध)

□ सत्य, ज्ञान आदि के संदर्भ में लडियाजी ने कभी समझौता नहीं किया था। वह युक्तिपूर्ण विवेक से काम करते थे। किसी हल्की बात पर भी ध्यान नहीं देते थे और हल्की बात करने वाले को भी छोड़ते नहीं थे। वह स्पष्टवादी थे, जिसे उनका एक मुख्य गुण माना जा सकता है। (वही)

निष्कर्ष : भले ही लडियाजी एक व्यवसाई थे, परंतु वे एक आदर्श व्यक्ति, आदर्श गृहस्थ, आदर्श अभिभावक, आदर्श मानव के प्रतिरूप थे। गीता के कर्म, ज्ञान और संन्यास- इन तीनों का संगम उनके जीवन में हुआ था। 'जल दल कमल' की भांति वे निस्पृह थे, मधुमक्खियों के फूलों से रस निचोड़ने जैसे वे ज्ञान-पिपासु थे, चंदन-लेप की तरह वे शांत प्रकृति के थे, लोकमंगल की ध्यान-धारणा से पुष्ट,

सहृदय पाठक एवं श्रोता थे, उन्होंने अपने हृदय में एक छोटे-से आकाश को बसा कर रखा था। वैसे एक व्यक्ति केवल 'गोलाघाट-रत्न' के लिए ही योग्य साबित नहीं हो सकते, बल्कि मानव समाज के लिए 'आशा का दीप', दिशा-निर्देश के लिए 'आकाश-दीप' की गरिमा प्राप्त करने का सामर्थ्य रखते हैं। अपने जीवनकाल में ही किंवदंती बनने वाले भगवती प्रसाद लडियाजी हमेशा समाज में एक आदर्श मानव के रूप में दीप्तिमान रहेंगे।



चित्रावली